मानवी

जनवरी -मार्च 2025

त्रैमासिक साहित्यिक ई पत्रिका

कविता सिंह

अहमदाबाद

तुम्हारा इंतजार
जैसे नदी को किनारे का
शिशिर को धूप का
भूसे को सूप का...

जैसे धमनियों को
रक्त का
चूल्हे को आग का
खेतों को गेहूं का और
मिट्टी को धान का...

जैसे घोड़े को घास का
कठफोड़वे को काठ का
पेड़ों को नीड़ का...

इंतजार
जैसे आँखों को नींद का
हाथों को हाथ का

वैसे ही मुझे
सिर्फ तुम्हारा और सिर्फ
तुम्हारा...

– कविता सिंह

त्रैमासिक ई पत्रिका
वर्ष– 5 ,अंक – 1 (जन - मार्च 2025)

प्रधान सम्पादक - कविता सिंह

****

सम्पादक—राजेश कुमार सिंह

****

आवरण -चित्र -तेजस सिंह

****

ई मेल : manvipatrika@gmail.com

****

Website : http://www.manvipatrika.co.in/

****

संरक्षक

श्रीमती जानकी किशोरी देवी एवं

श्री राम चन्द्र सिंह

****

पता -कार्यकारी -बी -701 ,स्वाति फ्लोरेंस , निकट सोबो सेंटर ,साउथ बोपल ,अहमदाबाद -380058

स्थायी - 274/x ,शक्ति णगर कालोनी ,आरोग्य मंदिर ,गोरखपुर -273003

मोब -9833775798

मानवी पत्रिका में प्रकाशित लेख /काव्य आदि रचनकारों के अपने विचार है ,जिनसे प्रकाशक/ संपादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का न्याय क्षेत्र गोरखपुर रहेगा। रचना की मौलिकता का दायित्व रचनाकार का है पत्रिका से जुड़े सभी पद अवैतनिक है ।

पत्रिका प्रधान संपादक कविता सिंह जी के स्वामित्व में आन-लाइन प्रकाशित होती है। पत्रिका के वेबसाईट से सभी अंकों का पीडीएफ़ डाउनलोड किया जा सकता है ।
पत्रिका निःशुल्क है , पत्रिका का उद्देश्य हिन्दी साहित्य की सेवा है।

पत्रिका आप सभी मित्रों से रचनात्मक सहयोग के अलावा अर्थ-सहयोग का भी निवेदन करती है, यह स्वैच्छिक है आप पेटिएम नं - 9833775798 पर स्वेच्छा से यथासंभव धनराशि सहयोग के रुप में अंतरित कर सकते हैं।

इस अंक में .....

कुछ मेरी भी	**संपादक**	**5**
काव्य धरोहर		
होली	मैथिली शरण गुप्त	7
होली	सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'	7
लेख/संस्मरण/आलेख		
प्रयोगधर्मी कवि : मुक्तिबोध	राजेन्द्र परदेसी	8
समकालीन परिवेश में नारी विमर्श	आकांक्षा यादव	12
नारी की यात्रा: प्राचीन गौरव से आधुनिक नवजागरण तक	प्रो. आरके जैन 'अरिजीत'	16
कविता की परिभाषा आज तक नहीं हो सकी	गिरेन्द्रसिंह भदौरिया "प्राण"	18
स्मृतियों में बसा: पेंच टाइगर रिजर्व	कनक किशोर	22
महाकुंभ की यादगार यात्रा	डॉ सतीश "बब्बा"	25
हास्य/व्यंग्य		
कर क्या लोगे , बुरा मान भी गए जो	विवेक रंजन श्रीवास्तव	21
कहानी		
असफल होती प्रेम कथा	अश्विनी कुमार दुबे	28
मर्ज का इलाज	बबीता गुप्ता	33
खड्ड पर बाँध	डॉ संदीप शर्मा	35
सहोदर	बृजनंदन प्रसाद "वियोगी"	38
लघुकथा		
सम्मान और सामान	दीपक कुमार	20
प्रेम	डॉ. चंद्रेश कुमार छतलानी	32
आलोचक का दर्द	पूनम झा 'प्रथमा'	41
शिकायतें अच्छी है	शोभा गोयल	42
होली के रंग निराले	संजय मृदुल	43

काव्य/हाइकु /गजल		
इंतज़ार	कविता सिंह	2
मोहनीय प्रेम	अनिमा दास	11
आया फागुन द्वार	डॉ प्रियंका भट्ट	17
फाल्गुन	डॉ अखिलेश शर्मा	27
फुहार	सुभाष सेमल्टी	34
प्रेम	पूजा शर्मा	37
रंग जाएँ हम	वेदवंती 'वेदी'	44
जीवन	रितु वर्मा	44
कविताएँ	सारिका भूषण	45
गीत	डॉ मीरा सिंह 'मीरा'	46
काव्य	प्रेरणा यादव	47
काव्य	डॉ शबनम आलम	48
भेदभाव को	मनोज जैन	49
महंगी फागुनी हवा	रंजना फतेपुरकर	49
कालचक्र	माधवी त्रिपाठी	50
सुहानी ऋतु	प्रोमिला भारद्वाज	50
आत्म– कथ्य	डॉ श्वेता दीप्ति	55
एक प्रश्न	बृज राज किशोर 'राहगीर'	59
दोहे	अनीता मिश्रा सिद्धि	61
पुस्तक समीक्षा		
ईश्वर मलेच्छ है	मीनाक्षी शुक्ला	51
बार -बार उग ही आएंगे	डॉ.ज़ियाउर रहमान जाफ़री	53
कितने बदल गए आदिवासी	गोपेंद्र कुमार सिन्हा गौतम	54
अम्मा	सतीश राठी	56
धरती पत्रिका की यात्रा	शैलेन्द्र चौहान	60
ईश्वर मलेच्छ है-प्रतिक्रिया	अनि वर्मा	62
साहित्य समाचार		64
साहित्य समाचार		65

कुछ मेरी भी....

साहित्य सृजन

साहित्य सृजन एक तपस्या है , लगन है , जुनून है,समझ है, संवेदनशीलता है ,समाज में चल रही लहर पर भावों का सहज एवं सरल प्रकटीकरण है। समाज के लिए जस का तस आईना है । साहित्य सृजन एक जिम्मेदारी है समाज के प्रति ,नौजवानों के प्रति, सामाजिक व्यवस्था के प्रति, देश की राजनैतिक ,कूटनीतिक व्यवस्था के प्रति। हर काल हर देश का साहित्य उस काल की अच्छाई एवं बुराइओं पर साहित्यकारों का संवेदनशील लेखन है। जिस देश काल में साहित्य को बढ़ावा दिया गया ,उस देश काल में साहित्य अपने चरम पर पहुँचा, ये भी सर्वविदित तथ्य है कि साहित्य में सच को दर्शाने के कारण बहुतों को यातना भी झेलनी पड़ी, कारागार भी जाना पड़ा, पर सच्चा कर्मनिष्ठ साहित्यकार हर देश हर काल में सच के साथ खड़ा रहा, सच लिखता रहा और समूचे समाज का पथ-प्रदर्शन करता रहा,समाज को आईना दिखाता रहा, समाज के मुखियाओं को भी सच का आईना दिखाता रहा। प्रसिद्धि पाने के लिए कभी भी लेखन नहीं किया गया हाँ कुछेक अपवादों को छोड़ दिया जाए तो। पहले के साहित्यकारों में गंभीरता दिखती थी ,विषय पर ज्ञान एवं पकड़ जबरदस्त होती थी,उनके लिए साहित्य सृजन प्रशंसा से कहीं सामाजिक जिम्मेदारी हुआ करता था। वो सारे साहित्यकार साहित्य खाते थे ,साहित्य पीते थे ,साहित्य ओढ़ते थे ,साहित्य बिछाते थे।

सोशल मीडिया आने के बाद से ,तमाम आनलाइन प्लेटफॉर्म सहज उबलब्ध होने के बाद से ,साहित्य की गुणवत्ता में भारी गिरावट आई है। कहने को तो आप यह भी कह सकते है कि साहित्य चूंकि समाज का आईना है ,और समाज में ही भारी गिरावट आ गई है , फलतः साहित्य भी समाज की तरह अपनी गुणवत्ता से लगातार दूर होता जा रहा है। बहरहाल सच तो यही है कि आज के समय में हर दूसरा आदमी स्वघोषित कवि है और हर तीसरा आदमी स्वघोषित लेखक है। face-book ,instragram आदि विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म इनकी उल्टियों से भरे पड़े है। यहीं नहीं इन समरूप कवियों और लेखकों का गैंग भी है ,खुद के राष्ट्रीय पुरुस्कार है। उच्चस्तरीय साहित्यिक संगोष्ठियों आयोजित की जाती है । देश के बेस्ट कवि, बेस्ट कवियत्री का सम्मान भी दिया जाता है। खुद ही लिस्ट बनाकर खुद की लोकप्रियता दिखाई जाती है। इस बीमारी की शिकार महिलायें सर्वाधिक है। प्रसिद्ध होने की चाह में ,ताली की आवाज सुनने की गंभीर इच्छा लिए ये सवयघोषित कवियों लेखकों को लूटने के लिए एक अलग प्रकार की संस्थाओं ने जन्म लिया हुआ है , जिनका कार्य है , पैसे लेकर ऐसे कवियों एवं लेखकों को पुरुस्कार प्रदान करना, ऐसे ही तमाम पत्रिकाएं भी निकाल रही है, जो ऐसे नाम पाने के लालायित लोगों से उनकी रचनाएँ अपनी पत्रिकाओं में छापने की एवज में उनसे पैसे लेते है । थर्ड क्लास की रचनाएँ पैसे लेकर छाप रहें है ,नामाभिलाषी सवयघोषित कवियों और लेखकों से पैसे लेकर ,उन्ही के पैसों से गोष्ठी का आयोजन करके ,उन्ही को मंचाशीन कराकर भारी भारी नामों वाले पुरुषकारों से नवाज रहें है।

किसी भले साहित्यकार ने ऐसे साहित्य को लुगदी साहित्य का नाम दिया है। मेरा मानना है ,कि इसमें से साहित्य भी हटा दिया जाए और ऐसी रचनाओं को सिर्फ लुगदी का ही नाम दिया जाए। मैं किसी की बुराई नहीं कर रहा हूँ,न ही मेरा उद्देश्य किसी व्यक्ति विशेष या किसी साहित्यिक संस्था की आलोचना है। मेरी टॉर्च की रोशनी सिर्फ इसलिए है कि जागो भाई जागों ,पहले साहित्य पढ़ना सीखों ,जब दो चार साल में पढ़ना सीख जाओं ,फिर लिखने की सुरुआत करना। कई साल की तपस्या के बाद पढ़ना समझ में आता है , फिर उसमें रमता है ,फिर कहीं जाके लिखने की सुरुआत होती है। दो-चार साल कलम घिसने के बाद समझ आता है क्या लिखना है ,कैसे लिखना है। पूरा जीवन गुजरने के बाद पता चलता है कि ,अभी भी कुछ अच्छा नहीं लिख पाया। और यहाँ लोग पैदा बाद में हो रहें है ,कवि और लेखक पहले बन जा रहें है।

तो मेरी ऐसे लोगों से गुजारिश है कि बनिए कवि और लेखक जरूर बनिए पर पहले अपने को उसके काबिल बनाएँ। अच्छे अच्छे साहित्यकारों की रचनाओं को खूब पढिए, और जब समझ आने लगे शब्दों में रस आने लगे ,तब लिखने की शुरुआत करिए। जितना हो सकें अपनी तारीफ सुनने से बचिए , पैसे देकर रचनाएँ छपवाने से बचिए ,पैसे देकर पुरुस्कार लेने से भी बचिए। सच सबको पता होता है ,आपको भी पता होगा ,तो भ्रम से दूर रहिए।

वर्ष 2024 का ज्ञानपीठ पुरुस्कार श्री विनोद कुमार शुक्ल को दिया गया है। यह हम सभी के लिए गर्व और बेहद खुशी की बात है। श्री शुक्ल लंबे समय से हिन्दी साहित्य की सेवा में रत है ,और श्री शुक्ल को ज्ञानपीठ मिलना ही लंबे समय से हिन्दी साहित्य में उनके महत्वपूर्ण योगदान को दर्शाता है। इससे पहले श्री शुक्ल को 1999 में उनके बहुचर्चित उपन्यास *"दीवार में एक खिड़की रहती थी"* को साहित्य अकादमी पुरुस्कार मिल चुका है ।उनकी रचनाओं में यथार्थवाद की झलक मिलती है। उन्होंने कई मर्मस्पर्शी कविताएँ हिन्दी साहित्य को दी है ,उनमें से एक आजकल सोशल मीडिया पर ट्रेंड कर रही है।

मैंने हाथ बढ़ाया
मेरा हाथ पकड़कर वह खड़ा हुआ
वह मुझे नहीं जनता था
मेरे हाथ बढ़ाने को जनता था

(-विनोद कुमार शुक्ल)

अप एण्ड डाउन जीवन का अभिन्न हिस्सा है ,कभी भी एक जैसा नहीं रहता ,कभी ऊपर कभी नीचे ग्राफ आता रहता है और यह जरूरी भी है , ईसीजी में सरल रेखा दुख देती है,जबकि टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ जीवन को दर्शाती है। इसीलिए कहता हूँ जब जीवन में उपर नीचे हो तो घबराएँ नहीं ,धैर्य बनाएँ रखें। यही जीवन है।

मेरी पूरी कोशिश के व्यवजूद कि यह अंक मार्च में निकल् जाए पर समय की व्यस्तता के चलते प्रस्तुत अंक में देरी हुई है , उमींद है अगला अंक ससमय निकलेगा। आप सभी के धैर्य और सहयोग के लिए हृदय से आभार.....

आपका
शुभेच्छू

काव्य धरोहर

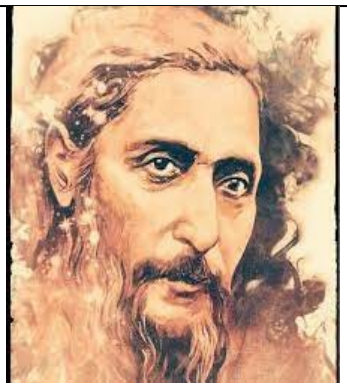

मैथिलि शरण गुप्त

होली

जो कुछ होनी थी, सब होली!

धूल उड़ी या रंग उड़ा है,

हाथ रही अब कोरी झोली।

आँखों में सरसों फूली है,

सजी टेसुओं की है टोली।

पीली पड़ी अपत, भारत-भू,

फिर भी नहीं तनिक तू डोली!

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

होली

केशर की, कलि की पिचकारीः

पात-पात की गात सँवारी।

राग-पराग-कपोल किए हैं,

लाल-गुलाल अमोल लिए हैं

तरू-तरू के तन खोल दिए हैं,

आरती जोत-उदोत उतारी-

गन्ध-पवन की धूप धवारी।

गाए खग-कुल-कण्ठ गीत शत,

संग मृदंग तरंग-तीर-हत

भजन-मनोरंजन-रत अविरत,

राग-राग को फलित किया री-

विकल-अंग कल गगन विहारी।

प्रयोगधर्मी कवि : मुक्तिबोध

राजेन्द्र परदेसी

राजेंद्र परदेसी साहित्य कि लगभग सभी विधाओं मे लिखते और अधिकांश चर्चित पत्र - पत्रिकाओ मे नियमित छपते है,लेखन से इतर इनके रेखाचित्र भी लगभग सभी चर्चित पत्रिकाओ मे नियमित छपते रहते है

इसके अतिरिक्त इनकी कहानी पर बनी और प्रदर्शित भोजपुरी फिल्म, 'साचि पिरितिया हमार ' जिसमे कुली फिल्म से प्रसिद्धि प्राप्त पुनीत इशर ने खलनायक की भूमिका निभाई थी तथा चर्चित गायक गायिका सुरेश वाडेकर और अनुराधा पोडवाल ने गीत गाये थे

राजेंद्र परदेसी अनेकों पत्रिका मे परामर्शदाता तथा कयी साहित्यिक संस्थाओं के संरक्षक के रूप मे जुड़े होने के कारण इनका परिचय क्षेत्र देश विदेश के साहित्यकारो से है

प्रकाशित कृति : हताश होने से पहले (कविता संग्रह), शब्दशिल्पियों के सान्निध्य में (साक्षात्कार -संग्रह),दूर होता गांव (लघुकथा-संग्रह) शब्दों के संधान (हाइकु-संग्रह), दूर होते रिश्ते (कहानी-संग्रह), भोजपुरी लोककथाएं(प्रकाशन विभाग, भारत सरकार), सृजन के पथिक (निबंध-संग्रह), सत्रह आखर (हाइकु-संग्रह), प्रश्नों की प्रतिध्वनि (साक्षात्कार-संग्रह), समय का चक्र (बाल कहानी संग्रह) सृजनधर्मिता के प्रतिमान (निबंध संग्रह), साहित्य के सहचर(निबंध संग्रह), साक्षात्कार के साक्ष्य (साक्षात्कार - संग्रह) संपादन-प्रतिनिधि कहानियां (कहानी संग्रह) । पूर्वोत्तर की काव्य यात्रा (कविता संग्रह), भारत नेपाल काव्य सेतु (कविता संग्रह) हिंदी की विश्वयात्रा (कविता संग्रह), भारत-नेपाल कथा संगम(कहानी संग्रह) ।

संपर्क : 136, मयूर रेजीडेंसी, फरीदीनगर, लखनऊ-226015, मो. 09415045584

हिन्दी काव्य जगत में प्रायः नये-नये प्रयोग होते रहे हैं, किन्तु छायावादोत्तर काव्य में प्रगतिवाद और प्रगतिशील काव्य के उपरान्त जो 'प्रयोगवाद' अस्तित्व में आया; वह ऐसी कविताओं के लिए रूढ़ हो गया, जो पूर्ववर्ती काव्य से भिन्न था। नए बोधों, संवेदनाओं तथा उन्हें प्रेषित करने वाले शैली-शिल्पों के चमत्कारों से युक्त एक नई काव्यधारा, जों प्रगतिशील कविताओं के साथ ही विकसित हुई, नई कविता के नाम से जानी-समझी गई। वस्तुतः इस नई काव्यधारा में नए -नए प्रयोग हुए, इसलिए इस काव्य-आन्दोलन को 'प्रयोगवाद' के नाम से अलग पहचान मिली। प्रयोगवाद के प्रवर्तक 'अज्ञेय' थे, जिन्होंने 1943 में 'तारसप्तक' के माध्यम से कुछ खास तरह के कवियों की कविताओं का संकलन प्रकाशित किया। 'तारसप्तक' में संकलित कविताएं प्रयोग की दृष्टि से सर्वथा नवीन थी। 'प्रयोगवाद' आगे चलकर 'नयी कविता' में पर्यवसित हो गया। 'अज्ञेय' ने दूसरा 'तारसप्तक' की भूमिका में 'प्रयोग' शब्द को स्पष्ट किया। उनके अनुसार 'प्रयोग अपने आप में इष्ट नहीं है, वरन् वह साधन है, दोहरा साधन है। एक तो वह उस सत्य को जानने का साधन है, जिसे कवि प्रेषित करता है; दूसरे वह उस प्रेषण-क्रिया को और उसके साधनों को जानने का साधन है।

'तारसप्तक' में संकलित कवियों की कविताओं पर दृष्टि डालने पर स्पष्ट होता है कि उन कवियों में अनेक असमानताएं हैं। अनुभव के क्षेत्र, कथ्य और दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न हैं। कुछ ऐसे कवि हैं जो विचारों से समाजवादी हैं और संस्कारों से व्यक्तिवादी। कुछ ऐसे हैं, जो न सिर्फ विचारों से ही समाजवादी हैं, अपितु संस्कारों और क्रियाओं से भी समाजवादी हैं। ऐसे कवियों में मुक्तिबोध और रामविलास शर्मा प्रमुख हैं।

' गजानन माधव मुक्तिबोध' का जन्म 13 नवम्बर, 1917 को ग्वालियर, मध्यप्रदेश में हुआ था। इनके पिता का नाम माधवराज मुक्तिबोध था। 'मुक्तिबोध' ने 1953 में नागपुर विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. किया। जीवन के अनेक दौर से गुजरते हुए इन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में भी काम किया। 1958 में दिग्विजय महाविद्यालय, राजनांद गांव में वे प्राध्यापक के पद पर नियुक्त हुए।

' गजानन माधव मुक्तिबोध' बहुआयामी प्रतिभा के साहित्यकार थे। हिन्दी साहित्य में सर्वप्रथम वे प्रयोगवादी कवि के रूप में उभरे। 'अज्ञेय' द्वारा संपादित प्रथम 'तारसप्तक' के दूसरे कवि थे। बाद में चलकर साहित्य की विविध विधाओं में भी लेखन आरम्भ किये। हिन्दी काव्य-जगत में वे एक ऐसे कवि हैं, जो अपने समकालीन कवियों से अलग हटकर काव्य-रचना किये, जिनमें अनुभव की व्यापकता तथा परिवेश की गहनता देखी जा सकती है।

मुक्तिबोध मूलतः कवि थे, प्रयोगवादी कवि। उनके काव्य पर विचार करते समय उनकी लम्बी-लम्बी कविताओं पर ध्यान जाना स्वाभाविक है। उनकी कविताओं की लम्बाई शिल्प की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। मुक्तिबोध की कविताओं की लम्बाई के पीछे यह कारण है कि वह कविता लिखने के लिए तैयार होते है तब समूचा समाज उनके साथ रहता है। इसी कारण छोटी कविताओं को लिखने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं। छोटी कविताओं में कोमल भावनात्मकता होती है किन्तु मुक्तिबोध कहीं पर भी कोरे भावुक नहीं है। इसीलिए लयात्मकता लिरिसिज्म को उन्होंने अपनी कविताओं का माध्यम नहीं बनाया। उन्होंने जिन विचारों को अपने काव्य में अभिव्यक्ति दी है, उसमें भावुकता एवं उच्छवास का अभाव है। कहीं पर भी इन कविताओं में लालित्य नहीं है। मुक्तिबोध की भावना के साथ न सिर्फ गैर रूमानीपन है, बल्कि एक वैरव्य भी है, समग्र समाज, क्लर्क, मजदूर, मास्टर, लेखक, कलाकार, पेंटर, किसान उनकी कविताओं में विद्यमान है। मुक्तिबोध अकेले कवि है जो सम्पूर्ण संघर्षशील मानव के प्रतिनिधि के रूप में हमारे समक्ष आते है और यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि संघर्ष के सारे स्तर मुक्तिबोध के काव्य में विद्यमान है।

काव्य की रचना प्रक्रिया पर सविस्तार विचार करते हुए मुक्तिबोध ने लिखा है कि सृजन के पूर्व रचनाकार के मन में एक खास प्रकार की काट-छांट, एक विशेष प्रकार की शैली योजना आती है जिसके अनुरूप रचना आकार ग्रहण करती है। 'एक साहित्यिक की डायरी' से लेकर 'नये साहित्य का सौंदर्यशास्त्र' तक मुक्तिबोध का समस्त लेखन उनके चिन्तन की विशेषता को उजागर करता है। काव्य रचना-विधान के संदर्भ मं यह बात पूरी तरह सही है।

मुक्तिबोध की अनुभूति व्यापक एवं गहरी है। वह उस सागर के समान है जिसे गागर में नहीं भरा जा सकता, उनमें अभिव्यक्ति की एक तीव्र छटपटाहट है। जो समझौता करने पर भी नहीं होती। वे अपनी लम्बी कविताओं से ही संतुष्ट नहीं है बल्कि वे उन्हें भी अधूरी कविता कहते हैं।

मुक्तिबोध की कविताओं में एक कथातत्व भी रहता है, जो उनके भावों एवं विचारों का इतिहास है। कथा तत्व होने पर भी उनकी कवितायें कहानी नहीं बनती केवल कथा का आभास देती है। जिसको वे रूपकों एवं चित्रों द्वारा हमारे सामने रखते हैं किन्तु फिर भी रूपकों का सिलसिला टूट जाता है और क्रमबद्ध रूप में नहीं रह पाता है। मुक्तिबोध ने अपने निबंध 'एक लम्बी कविता का अंत' में लिखा है - 'गद्य में वह रूपक एक सिलसिले से सामने आता है लेकिन कविता में यह सिलसिला टूट जाता है और क्रमबद्ध रूप में नहीं रह पाता है। मुक्तिबोध ने अपने निबंध 'एक लम्बी कविता का अंत' में लिखा है - 'गद्य में वह रूपक एक सिलसिले से सामने आता है लेकिन कविता में यह सिलसिला टूट जाता है। उसी तरह जैसे स्वप्न के भीतर स्वप्न आते जाते हैं। उलट-पलट होकर, कविता में मैंने इस उलट-पलटपन का निर्वाह करने का प्रयत्न किया है।'

मुक्तिबोध में वर्तमान व्यवस्था के प्रति आक्रोश एवं नैराश्य की भावना थी। वे इस व्यवस्था को उखाड़ फेंकना चाहते थे और इसलिये वे एक क्रान्ति भी चाहते थे। निराशा, आक्रोश एवं वेदना के कारण उनमें एक आवेग था। एक संघर्ष था और यह संघर्ष वाह्य संघर्ष से उत्पन्न तीव्र असंतोष एवं आक्रोश से अनुभूति का था। उन्होंने भाषा को तोड़-फोड़ कर और उसमें अभिव्यक्ति की शक्ति का नया आविष्कार करके काव्य सृजन किया था।

मुक्तिबोध के विषय में कुछ आलोचकों की यह धारणा स्वाभाविक ही है कि उन्होंने अपने विचारों की अभिव्यक्ति के लिये नयी कविता को ही क्यों चुना कारण यह है कि मुक्तिबोध में भावावेश नहीं था। वे काव्य सृजन करते समय चिंतन भी करते जाते थे। अतः गीत या तुकबंदी उनके गूढ़ विचारों को अभिव्यक्त नहीं कर सकते थे। वे लिखते जाते थे और संशोधन करते जाते थे। उनकी सृजन प्रक्रिया बड़ी जटिल थी। जानबूझ कर तुकबंदी नहीं करते थे। यदि काव्य रचना के प्रवाह में कोई तुकबंदी स्वाभाविक रूप से आ जाता था तो उसे जोड़ देते थे और यदि तुक नहीं मिलता था तो वे उसके लिए परेशान भी नहीं होते थे। दृष्टव्य है-

मुझे भ्रम होता है कि प्रत्येक पत्थर
में चमकता हीरा है।
हर एक छाती में आत्मा अधीरा है

प्रत्येक सुस्मित में विमल सदानीरा है।

प्रतीक और बिम्ब काव्य के अनिवार्य अंग है। मुक्तिबोध के प्रतीक उनकी निजी दृष्टि से प्रेरित हे। इनके प्रतीकों की यह विशेषता है कि कहीं पर भी उनमें जाटिल्य नहीं है। प्रतीक के समझ में नहीं आने पर भी उनकी कविता का मर्म समझने में कठिनाई नहीं होती। इनकी कविताओं में प्रतीक आये हैं किन्तु कहीं पर भी कवितायें प्रतीक बनकर नहीं रह गई है। मुक्तिबोध ने कविता को अपने सार्थक और मौलिक प्रतीकों के द्वारा कलात्मक सौंदर्य गहराई तथा भूतकाल के पौराणिक प्रतीकों का भी प्रयोग पर्याप्त मात्रा में किया है, वस्तुतः उनके प्रतीक सुनियोजित, सुव्यवस्थित सटीक होते है।

रावण के पौराणिक प्रतीक द्वारा वे यह स्पट करते है कि हमारा मन भी जो काठ के रावण की तरह व्यक्ति की प्रतिमा बनकर रह गया है। जो परम्पराओं को स्वीकार करता हुआ खोखला होकर रह गया है। उसे अब जला देना चाहिये ताकि उसे जलाकर हम अपनी रिक्तता को समाप्त कर सके और वास्तव की पहचान कर मात्र दृष्टा न रहकर और भी कुछ कर सके। काठ के रावण के प्रतीक द्वारा उन्होंने यह भी बताया है कि आज प्रत्येक व्यक्ति की स्थिति कागज और बांस के बने रावण के पुतले सरीखी ही हास्यास्पद है।

सब तरफ अकेला
शिखर पर खड़ा हूँ
लक्ष्य मुख दानव-सा लक्ष्य हस्त देव सा
परन्तु वह क्या
आत्म प्रतीति ही धोखा ही दे रही
स्वयं को ही लगता हूँ पट्ठों के
बांस और कागज के बने हुये
महाकाल रावण-सा हास्यप्रद
भयंकर

ब्रह्मराक्षस भी एक पौराणिक प्रतीक है जो अतृप्ति एवं अचेतन मन के प्रतीक रूप में प्रयुक्त है। ब्रह्मराक्षस की तरह ही आज का बुद्धिजीवी भी अहम का शिकार है जो विश्व की प्रत्येक अच्छी या बुरी घटित घटना को स्वयं के लिये ही घटित घटना मानने की भूल करता है। ब्रह्मराक्षस की क्रियाओं द्वारा आज के भ्रमित बौद्धिक मानव के थोथे एवं झूठे अहंकार का सुन्दर चित्रण तथा उसकी भ्रमपूर्ण स्थिति का आंकलन मुक्तिबोध ने किया है-

पथ भूलकर जब चाँदनी की किरण टकराये
कही दीवार पर
तब ब्रह्मराक्षस समझता है
चन्द्रमा की चांदनी ने
ज्ञान गुरू माना उसे
एकलव्य और अर्जुन दोनों ही जिज्ञासु मन के प्रतीक है जो युग के बुद्धिजीवियों के मन में स्थित प्रश्न को और हमारे सामने के जीवन को भी प्रस्तुत करते है-
मैं एकलव्य जिसने देखा
ज्ञान के बंद दरवाजे की दरार से ही
भीतर का महा मनोमन्थनशाली मंमोज्ञ

प्राणकर्षक प्रकाश देखा

मुक्तिबोध की कविताओं में प्रयुक्त प्रतीक जीवन की व्याख्या करते है, जीवन युग की गहराई का सन्दर्भ प्रदान करते है। आकर्षण या डेकोरेशन ही नहीं है। बल्कि जीवन यथार्थ और सत्य को भी अभिव्यक्ति देते हैं। खोखले प्रतीक उनकी कविताओं में नहीं है। संवेदात्मक कहानी है। उनके प्रतीकों के पार्श्व में एक ठोस विस्तृत कैनवास है।

बिम्ब मुक्तिबोध के काव्य के साध्य नहीं है। मुक्तिबोध में संवेदना थी। इसीलिए वे अपने काव्य में बिम्बों को जीवन और समाज में दिन प्रतिदिन धटने वाली घटनाओं से लेते है। वे सिर्फ कल्पना के सहारे बिम्बों को गढ़ते नहीं है और न एक शिल्पी की तरह केवल उनका पालन करते है। उनके काव्य में वास्तविक जीवन की रहस्यमयता एवं कराहती हुई त्रस्त मानवता के दर्शन होते है। उनका प्रत्येक बिम्ब एक कहानी लिए हुए है। मानव जीवन की असाध्य व्यथा है।
पिस क्या वह भीतरी
जो बाहरी दो कठिन पाटों के बीच
ऐसी ट्रेजेडी हो नीच
मुक्तिबोध अपनी आंतरिक वेदना को सामाजिक वेदना में मिलाकर प्रकट करते हैं। वर्तमान व्यवस्था में सुधारवादी और अवसरवादी व्यक्ति ही पनपते है किन्तु बौद्धिकता और सांस्कृतिकता से उनके मस्तिष्क रिक्त रहते है। जो करूणा और सहानुभूति को कूड़ा करकट मान उन्हें नकारा करते हैं। दृष्टव्य है-

अन्तर्जीवन के मूल्यवान व संवेदन
उसका विवेक संगत प्रयोग हो सका नहीं
करूणामयी करूणा फेंकी गई
रास्ते पर कचरे जैसी
मैं चिह्न रही उसको

युग के यथार्थ से परिचित मुक्तिबोध आज के तथाकथित मानव के भीतर जो पाशविकता आदि प्रवृत्यिं है उनको भी अपने काव्य में बिम्बों के माध्यम से पाठकों के सामने प्रस्तुत करते हैं। आज हर मनुष्य के भीतर एक औरांग-उटांग है जो हमारी आदतों, स्वभाव, विचारों, सभ्यता एवं संस्कृति पर हावी है-

स्वयं की ग्रीवा पर
फेरता हूँ हाथ कि
करता हूँ महसूस
एकाएक गगन पर ठगी हुई
सघन अमाल और
शब्दों पर उगे हुये बाल तथा
वाक्यों में औरांग-उटांग के बढ़े हुए

नाखून

मुक्तिबोध प्रयोगवादी कवि है। इसलिए स्वभावतः उनके काव्य में प्रयुक्त भाषा भी प्रयोगवादी रही है। जिस प्रकार उन्होंने नवीन प्रतीकों की ओर ध्यान दिया है। उसी प्रकार भाषा में भी भावों के अनुसार परिवर्तन करके उसे नया संस्कार दिया। उनकी भाषा में कहीं सरसता है तो कहीं संस्कृत तत्सम शब्दों का बाहुल्य है। कहीं कहीं अंग्रेजी उर्दू फारसी शब्दावली का प्रयोग अनायास किया है ।

हे रहस्यमय ध्वंस महाप्रभु जो जीवन के तेज सनातन
तेरे अग्निकणों से जीवन, तीक्ष्ण वाण से नूतन सर्जन
अरबी-फारसीयुक्त भाषा के प्रयोग दृष्टव्य-
दिल में अलग जबड़ा अलग दाढ़ी लिए
दुमुँहेपन के सौ तजुर्बो की बुजुर्गी से परे
दढ़ियल सिपहसालार संजीदा सहमकर रह गये।

मुक्तिबोध के काव्य में राजनैतिक, वैज्ञानिक एवं पौराणिक आदि अनेक प्रतीक सजीव सार्थक एवं कथ्य से संयुक्त बिम्बों का सृजन करते है। जासूसी उपन्यासों एवं साइंस फिक्सन के अधिक पाठन के कारण उनके अनेक बिम्ब रहस्यमय और तिलस्मी लगते हैं। कहीं-कहीं पर भूत-प्रेत आदि इरेशनस बिम्बों की संरचना भी है। वे मुक्तिबोध कहीं पर भी राजनैतिक नारेबाज कवि नहीं है। देश के व्याप्त भ्रष्टाचार एवं गांधी के चेलों के दोगलेपन पर प्रहार करने में वे नहीं चुके है। बढ़ती हुई फासिस्ट प्रवृत्ति पर जहाँ उनके मन में आक्रोश है वहीं वे साम्यवादी विचारों के प्रदर्शन से भी खीझ उठते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मुक्तिबोध की काव्य -यात्रा में प्रतीकों एवं बिम्बों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ है। उनके बिम्ब जहाँ आज की जिन्दगी के यथार्थ की कथा कहते हैं। वहीं आस्था एवं क्रान्ति का आह्वान भी करते हैं। तात्पर्य यह है कि उनके बिम्ब आज के जीवन में व्याप्य भय, घुटन, पीड़ा, उत्पीड़न और खोखलेपन को व्यक्त करते हुए मानसिक छायाभासों के दृश्यबिम्ब, ब्रह्मराक्षण, भूत-प्रेत, पिशाच आदि प्रतीकों द्वारा निर्मित हुये है।

मुक्तिबोध ने हिन्दी साहित्य जगत को अपनी विविध मूल्यवान कृतियों से समृद्ध किया है जिसमें काव्य ही नहीं, कथा साहित्य, आलोचना तथा इतिहास भी सम्मिलित हैं। 'चाँद का मुँह टेढ़ा है', 'भूरी-भूरी खाक धूल' (कविता संग्रह), काठ का सपना, विपात्र, सतह से उठता आदमी (कथा साहित्य), कामायनी : एक पुनर्विचार, नई कविता का आत्म संघर्ष, नए साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र, आखिर रचना क्यों?, समीक्षा की समस्याएं, एक साहित्यिक की डायरी (आलोचना) तथा 'भारत : इतिहास और संस्कृति (इतिहास) प्रमुख कृतियां हैं। नेमिचंद जैन के सम्पादन में 'मुक्तिबोध रचनावली' (6 खण्डों में) राजकमल प्रकाशन से प्रकाशित है।

क्रान्ति और सृजन का सपना मन में लिये मुक्तिबोध की कविताओं में जन-जन का चेहरा अलग-अलग नहीं, अपितु एक दिखाई देता है, एक अन्तवर्ती एकता परिलक्षित होती है। यही एकता कथ्य बनकर कविता में आकार ले सकी है जो पूरे मानव समाज को संघर्षकारी संकल्प की प्रेरणा देती है। जनता के इस विराट स्वरूप को कविता में मिश्रित करने वाले मुक्तिबोध 11 सितम्बर, 1964 को अलविदा कहकर जन-जन की आँखों में आँसू और उदासी बो गए।

काव्य

अनिमा दास
कटक, ओड़िशा

मोहनीय प्रेम

इस नील नीरव निदाघ में
कैसे आई वर्षा की महक
छम-छम करती बूँदें
कैसे आई माघ में..

कहीं तरंगिणी की मंदिमा
कहीं शैल का मौन चंद्रमा
निःशब्द मेरी प्रतिछवि से
करते अहरह कथोपकथन
लिए अंजुरी में पुष्प-लताएँ
कि देह बनती वंशी...
स्पर्श करती अधरों की लालिमा से..
कैसे आई वर्षा की महक
नीरव निदाघ में
माघ में....

नवयौवन से पुलकित भ्रमर
सुनता परागों की अभिलाषा
कहता पवन से.. उड़ा ले जाए
कहीं दूर..उनकी अंतर्भाषा
अग्नि वन-वन.. किंतु प्रेम में
भ्रमर बनता मोहना बाग में
कैसे आई वर्षा की महक
नीरव निदाघ में
माघ में...

इस नील नीरव निदाघ से
कह दूँ.. माघ से
वसंत का हुआ अवतरण है
स्वप्न रंग-बिरंगे नयनों में
लिए रात्रि वियोग की ज्वाला में
न करेगी व्यतीत अब
मोहन की प्रतीक्षा में...
कह दूँ... निदाघ से...
माघ से....

समकालीन परिवेश में नारी विमर्श

आकांक्षा यादव

कॉलेज में प्रवक्ता। साहित्य, लेखन और ब्लॉगिंग के क्षेत्र में भी प्रवृत्त। नारी विमर्श, बाल विमर्श और सामाजिक मुद्दों से सम्बंधित विषयों पर प्रमुखता से लेखन। लेखन-विधा- कविता, लेख, लघुकथा एवं बाल कविताएँ। अब तक 4 पुस्तकें प्रकाशित- 'प्रकृति, संस्कृति और स्त्री' (2023), 'आधी आबादी के सरोकार' (2017), 'चाँद पर पानी' (बाल-गीत संग्रह-2012) एवं 'क्रांति-यज्ञ : 1857-1947 की गाथा' (संपादित, 2007)।

देश-विदेश की प्रायः अधिकतर प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं और इंटरनेट पर वेब पत्रिकाओं व ब्लॉग पर रचनाओं का निरंतर प्रकाशन। व्यक्तिगत रूप से 'शब्द-शिखर' और युगल रूप में 'बाल-दुनिया', 'सप्तरंगी प्रेम' व 'उत्सव के रंग' ब्लॉग का संचालन। 60 से अधिक प्रतिष्ठित पुस्तकों/संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाएँ, वार्ता इत्यादि का प्रसारण। व्यक्तित्व-कृतित्व पर डॉ. राष्ट्रबंधु द्वारा सम्पादित 'बाल साहित्य समीक्षा' (नवम्बर 2009, कानपुर) का विशेषांक जारी।

संपर्क: आकांक्षा यादव, पोस्टमास्टर जनरल आवास, बंगला नं.-22. कैंटोनमेंट, शाही बाग, अहमदाबाद (गुजरात)-380004
ई-मेल: akankshay1982@gmail.com

नारी विमर्श, नारीवाद, नारी अस्मिता, नारी स्वातंत्र्य, नारी सशक्तिकरण जैसे तमाम विषय आज पूरी दुनिया में गंभीर बहस का विषय हैं। इन पर अकादमिक से लेकर राजनैतिक स्तर तक और घरेलू से लेकर सामाजिक और आर्थिक स्तर तक बहसें हो रही हैं। औपचारिक से लेकर अनौपचारिक स्तर तक चल रही इस पहल ने नारी के भीतर एक नई शक्ति और संभावनाओं के नए युग की शुरुआत की है। इसने जहाँ नारी के भीतर अधिकारों की लौ जलाई है, वहीं उन्हें अपने अधिकारों के लिए सतत संघर्ष करना भी सिखाया है। कभी अरस्तू ने कहा था, "स्त्रियाँ कुछ निश्चित गुणों के अभाव के कारण स्त्रियाँ हैं" तो संत थॉमस ने स्त्रियों को "अपूर्ण पुरूष" की संज्ञा दी थी, पर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ऐसे तमाम सतही सिद्धान्तों का कोई अर्थ नहीं रह गया एवं नारी अपनी जीवटता के दम पर नए आयाम गढ़ रही है। नारी आज न सिर्फ सशक्त हो रही है, बल्कि लोगों को भी सशक्त बना रही है।

वैश्विक स्तर पर देखें तो नारी विमर्श का उदय पश्चिम में हुआ माना जाता है। पाश्चात्य दार्शनिक और विचारक एच.टी मिल तथा जे.एस. मिल ने सर्वप्रथम निबंधों की एक सीरीज प्रकाशित की जिसमें कहा गया कि स्त्रियोचित तथा पुरूषोचित गुणों का विकास सामाजिक परिवेश पर निर्भर करता है। वास्तव में स्त्रियों की सामाजिक पराधीनता को समाप्त करना आज के दौर में सबसे आवश्यक है। उन्हें सामाजिक और आर्थिक अवसर तथा शिक्षा उपलब्ध कराना ही सही अर्थों में न्याय दिलाने में उपयोगी साबित होगा। कालांतर में नारी विमर्श ने मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होकर सामाजिकता के साथ-साथ आर्थिक स्वतंत्रता को भी दर्शाया। उसके बाद उग्र नारीवाद आया। इसमें यह कहा गया कि पुरुष द्वारा स्त्री का शोषण सर्वत्र और हर समाज में होता है। वहीं प्रसिद्ध समाजशास्त्री सिमोन द बोउआर ने कहा कि, "स्वाभाविक तौर पर स्त्री पैदा नहीं होती बल्कि उसमें लिंगभेद की चेतना पैदाकर उसके स्त्री होने का अहसास कराया जाता है। स्त्री-पुरुष समता में शरीर न तो बाधक है न बंधक। समाज की मनोवृत्ति में बदलाव किये बिना विमर्श के लाभ को पूरी तरह प्राप्त करना संभव नहीं है।"

नारियों को अपनी पहचान बनाने लिए काफी संघर्ष करना पड़ा। 1900 के आरंभ में 'अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस' मनाने की शुरूआत हुई थी। वर्ष 1908 में न्यूयार्क की एक कपड़ा मिल में काम करने वाली करीब 15 हजार महिलाओं ने काम के घंटे कम करने, बेहतर वेतन और वोट का अधिकार देने के लिए प्रदर्शन किया था। इसी क्रम में 1909 में अमेरिका की ही सोशलिस्ट पार्टी ने पहली बार नेशनल वुमन-डे मनाया था। वर्ष 1910 में डेनमार्क के कोपेनहेगन में कामकाजी महिलाओं की

अंतर्राष्ट्रीय कॉन्फ्रेंस हुई जिसमें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला दिवस मनाने का फैसला किया गया और 1911 में पहली बार 19 मार्च को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस मनाया गया। उस समय इसका प्रमुख ध्येय महिलाओं को वोट देने का अधिकार दिलवाना था क्योंकि उस समय अधिकतर देशों में महिलाओं को वोट देने का अधिकार नहीं था। इसे सशक्तिकरण का रूप देने हेतु लाखों महिलाओं ने रैलियों में हिस्सा लिया। 1911 में ही महिलाओं के अधिकार के लिये लड़ने वाली नेन्सी एस्टर, ब्रिटिश संसद की पहली महिला सासंद बनीं। जैसे-जैसे महिलाएं मुखर होती गईं, आंदोलनों दायरा भी बढ़ता गया। 1917 में रुस की महिलाओं ने, महिला दिवस पर रोटी और कपड़े के लिये हड़ताल पर जाने का फैसला किया। यह हड़ताल भी ऐतिहासिक थी। अंततः जार ने सत्ता छोड़ी और अन्तरिम सरकार ने महिलाओं को वोट देने के अधिकार दिये। उस समय रुस में जुलियन कैलेंडर चलता था और बाकी दुनिया में ग्रेगेरियन कैलेंडर। इन दोनो की तारीखों में कुछ अन्तर है। जुलियन कैलेंडर के मुताबिक 1917 की फरवरी का अंतिम रविवार 23 फरवरी को था जबकि ग्रेगेरियन कैलैंडर के अनुसार उस दिन 8 मार्च था। इस समय पूरी दुनिया में (यहाँ तक कि रूस में भी) ग्रेगेरियन कैलैंडर चलता है। तब से विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं के प्रति सम्मान, प्रशंसा और प्यार प्रकट करते हुए 8 मार्च को महिलाओं के राजनीतिक, सामाजिक, और आर्थिक उपलब्धियों के उपलक्ष्य में महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है।

यद्यपि नारी आंदोलन और विमर्श की जड़ें पाश्चात्य देशों में खोजी जाती हैं, पर भारत में भी आरंभ से ही इसके सूत्र मिलते हैं। भारतीय संस्कृति में नारी को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। वह शिव भी है और शक्ति भी, तभी तो भारतीय संस्कृति में सनातन काल से अर्धनारीश्वर की कल्पना सटीक बैठती है। शास्त्र से लेकर साहित्य तक नारी की महत्ता को स्वीकार किया गया है, "यत्र नार्यस्तु पूजयन्ते, रमन्ते तत्र देवता।" सिंधु संस्कृति में भी मातृदेवी की पूजा का प्रचलन परिलक्षित होता है। नारी का कार्यक्षेत्र न केवल घर बल्कि सारा संसार है। प्रकृति ने वंश वृद्धि की जो जिम्मेदारी नारी को दे रखी है, वह न केवल एक दायित्व है अपितु एक चमत्कार और अलौकिक सुख भी है। इन सबके बीच नारी आरंभ से ही अपनी भूमिकाओं के प्रति सचेत रही है। 'नारीवाद' या 'फेमिनिज्म' के रूप में नारी द्वारा अपने अधिकारों के लिए की जाने वाली लड़ाई सदियों पुरानी है। भारतीय संदर्भ में देखें तो हमारे वेद और ग्रंथ नारी शक्ति के योगदान से भरे पड़े हैं। विश्ववारा, अपाला, लोमशा, लोपामुद्रा तथा घोषा जैसी विदुषियों ने ऋग्वेद के अनेक सूक्तों की रचना करके और मैत्रेयी, गार्गी, अदिति इत्यादि विदुषियों ने अपने ज्ञान से तब के तत्वज्ञानी पुरूषों को कायल बना रखा था। नारी को आरंभ से ही सृजन, सम्मान और शक्ति का प्रतीक माना गया है। जब गार्गी याज्ञवल्क्य के साथ संवाद करती है, तो कहीं-न-कहीं वह नारी अस्मिता और इसके सशक्तिकरण की लड़ाई लड़ रही होती है। इसी प्रकार जब शकुंतला, दुष्यंत द्वारा न पहचाने जाने पर उन्हें भला-बुरा कहकर वहाँ से लौटने लगती है, तो वो भी वह अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ रही होती है। महाभारत काल में जब द्रौपदी भरी सभा में अपने अपमान पर वहाँ उपस्थित लोगों से धर्म का अर्थ पूछती है और अपने पतियों को धिक्कारती है, तो वहाँ भी एक तरह का नारीवाद है। नारी ने जब-जब आवाज उठाई उसकी आवाज को कुंद करने का प्रयास किया गया लेकिन उसका संघर्ष भी उतना ही पुराना है। पश्चिम में भले ही उसे 'नारीवाद' नाम मिल गया हो, लेकिन स्त्री की अपनी अस्मिता, अस्तित्व और अधिकारों की ये लड़ाई प्रायः हर देश-काल में मौजूद थी और सदियों पुरानी है।

नारी मुक्ति आन्दोलन से नारी ही प्रथमतः जुड़ी, जिसकी अभिव्यक्ति उसके लेखों, नारों इत्यादि में दिखायी देती है। लिंगीय विभेद के प्रश्न को उठाने वाली प्रथम पाश्चात्य दार्शनिक चिन्तक सिमोन द बोउआर (The second sex -1949) थीं। अस्तित्ववादी विचारों की पोषक बोउआर ने स्त्रियों के विरूद्ध होने वाले अत्याचारों और अन्यायों का विश्लेषण करते हुए लिखा, "पुरूष ने स्वयं को विशुद्ध चित्त (Being-for- itself : स्वयं में सत्) के रूप में परिभाषित किया है और स्त्रियों की स्थिति का अवमूल्यन करते हुए उन्हें "अन्य" के रूप में परिभाषित किया है व इस प्रकार स्त्रियों को "वस्तु" रूप में निरूपित किया गया है। बोउआर का मानना था कि स्वयं स्त्रियों ने भी इस स्थिति को स्वीकार कर लिया। 19वीं सदी की महान नारीवादी ब्रिटिश लेखिका वर्जीनिया वुल्फ की 'ए रूम ऑफ वन्स ओन' से लेकर तस्लीमा नसरीन की 'औरत के हक में', हिंदी लेखिका मैत्रेयी पुष्पा की 'आज की नारी' और प्रभा खेतान की 'बाजार के बीच, बाजार के खिलाफ' जैसी तमाम पुस्तकें नारी विमर्श को बढ़ावा देती हैं। वृंदा करात की ' भारतीय नारी संघर्ष और मुक्ति', इतालवी पत्रकार और

लेखिका ओरियाना फेलेसी की 'एक खत अजन्मे बच्चे के नाम', तथा जेस्मिन लोरेंस की 'महिला श्रमिक : सामाजिक स्थिति एवं समस्याएं', ऐलिन मोर्गन की 'नारी का अवतरण' जैसी तमाम पुस्तकें स्त्री समाज के विभिन्न आयामों को उनके परिवेश के साथ प्रतिबिंबित करती हैं और उनका विश्लेषण करती नजर आती हैं। व्यापक सरोकार को समेटे इन तमाम कृतियों के केंद्र में स्त्री का संघर्ष और अस्मिता है। ये न तो नारेबाजी में उतरती हैं, न किसी हवालोक में जाकर कोई आदर्शवादी चित्र प्रस्तुत करने की राह पकड़ती हैं। उनके पास खुद के भोगे गए यथार्थ अनुभव और अपने परिवेश की घटनाओं की पूंजी है, जिससे नारी विमर्श आकार लेता है।

नारीवादी विमर्श किसी एक कालखण्ड से बंधा हुआ नहीं है बल्कि यह वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अतीत का विश्लेषण करता है। भारतीय सभ्यता-संस्कृति में भी यह स्त्री की ऐतिहासिक अवस्थिति को पहचानने की कोशिश करता है। स्त्री की पीड़ा यह है कि उसे अपनी बात कहने का हक ही नहीं दिया गया। जब स्त्री ने कुछ कहने की सोची तो उसे उसके दायरे में कैद कर दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि स्त्री की रचनात्मकता और वैचारिकता का प्रस्फुटन ही उसकी मानसिक पीड़ा और समस्या बन गई। इससे स्त्री के अंदर का छुपा सच समाज के सामने नहीं आ पाया। यह भी सोचने का विषय है कि जहाँ एक ओर अभिव्यक्ति के लिए नारे लगाए जाते हों वही दूसरी ओर स्त्री को अपनी बात भी कहने का अधिकार न हो। स्त्री की वेदना का अनुभव संसार कितना बड़ा है, लेकिन हमेशा उसे सामाजिक पटल पर आने से रोका जाता रहा। भारतीय संस्कृति में एक ओर स्त्री को देवी मानने का आदर्श रहा है तो दूसरी ओर पुरूष प्रधान सत्ता के तहत स्त्री को अधीनस्थ बनाए रखने का यथार्थ भी। तभी तो डॉ. राम मनोहर लोहिया जैसे विचारक स्त्री को परतंत्र बनाने वाली विभिन्न शक्तियों और उनके आपसी संघात को देखते हैं और मानते हैं कि स्त्री की स्थिति जैविक रुप से एक खास शारीरिक इकाई होने का ही प्रतिफल नहीं, बल्कि स्त्री की परतंत्रता, जाति, वर्ग, धर्म जैसे कारकों का भी प्रतिफल होती है। धर्म और संस्कृति के सहारे पितृसत्ता स्त्री के एक स्वतंत्रचेता व्यिक्तत्व होने की संभावनाओं को नष्ट करती रही है। अभी भी तमाम धार्मिक स्थलों पर नारी के प्रवेश को लेकर तमाम बंदिशें हैं। हिंदू समाज में उसी स्त्री को आदर्श माना गया जो मनसा-वाचा-कमर्णा पति की अनुगामिनी रही हो। निर्गुण रुप में वह स्त्री को देवी मानता है, सगुण में दासी। लोहिया कहते हैं कि पुरुष स्त्री को प्रतिभासंपन्न और बुद्धिमती भी बनाना चाहता है और उसे अपने कब्जे में भी रखना चाहता है। दूसरे शब्दों में कहें तो आज के दौर में पुरुष को ऐसी स्त्री चाहिए, जो अपने कौशल में तो अंग्रेज स्त्रियों की तरह हो, लेकिन भारतीय संस्कृति यानी पुरानी पितृसत्ता की संवाहक भी हो।

भूमंडलीकरण के बाद के प्रभावों, प्रतिफलों, सरोकारों और चिंताओं से नारी विमर्श भी अछूता नहीं रहा है। उपभोक्तावादी संस्कृति कई बार नारी को एक आब्जेक्ट के रूप में पेश करती है, जिसे केवल उपभोग करना है, मानो उसकी कोई भावना ही नहीं। ऐसे में पाश्चात्य सभ्यता के समर्थक कुछ लोगों को नारी स्वतंत्रता का रास्ता दैहिक वर्जनाओं को तोड़ने और उन्मुक्तता में दिखा। महिलाओं को बाजार में उपभोक्ता वस्तुओं की बिक्री में लुभाने के अंदाज के कारण भी यह स्थिति उत्पन्न हुई। कई समकालीन विद्वान स्त्री की अस्मिता और स्वतंत्रता को उसकी यौन स्वतंत्रता की परिधि में ही सीमित रखने की रूढ़ि के शिकार हैं। समाज का एक बड़ा वर्ग अब स्वीकारता है कि स्त्री को"सेक्स" का पर्यायवाची बनाकर "यौन प्राणी" मात्र बना दिया गया अर्थात पुरूष को विषयी, निरपेक्ष व स्वायत्त रूप में एवं स्त्री को विषय, अन्य, सापेक्ष व पराधीन रूप में माना गया। इस प्रकार एक चेतन वर्ग द्वारा दूसरे चेतन वर्ग को अधीनता प्रदान की गयी और दूसरे वर्ग ने अपनी अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार स्त्री-पुरुष में एक द्वैत की स्थापना की गई है। एक विचारक के शब्दों में, "पुरुषों की नैतिकता महज सेक्स तक सीमित है लेकिन स्त्री की नैतिकता को उसके व्यवहार से जोड़ दिया गया है।" ऐसे में मॉरल-पुलिसिंग के नाम पर नैतिकता का समस्त ठीकरा महिलाओं के सिर पर थोप दिया जाता है। समय समय पर महिलाओं के वस्त्र-चयन को लेकर, शिक्षा, घूमने-फिरने इत्यादि को लेकर नियम बनाये जाते हैं। कई बार तो सुनने को भी मिलता है कि महिलाएं अपने पहनावे से ईव-टीजिंग को आमंत्रण देती हैं, मानो वे सेक्स ऑब्जेक्ट हों। इन दोनों छोरों के बीच नारी अपनी अस्मिता के लिए दोहरा संघर्ष करती है। आज नारी अपने अस्तित्व और अस्मिता दोनों के प्रति सजग हो रही है।

नारी अस्मिता एक व्यापक शब्द है, जिसमें वह एक तरफ तो घरेलू मोर्चे पर लड़ती है वहीं घर से बाहर भी उसे अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़नी होती है। वस्तुतः उसका यथार्थ जीवन इतना कटु है कि उसके अपने सपने कब खत्म हो जाते हैं पता ही नहीं चलता। अपनी अस्मिता की तलाश भी वह कल्पना लोक में ही करती रहती है। तभी तो सिमोन द बोउआर ने कहा था, "नारी का बड़बड़ाना भी उसका विरोध दर्ज करना है।" यह अनायास ही नहीं है कि नारी स्वातंत्र्य के नाम पर चल रहे तमाम आंदोलनों और विमर्शों को कई बार परम्परागत मूल्यों के विपरीत बताते हुए अराजक तक कह दिया जाता है। नारी की प्रगतिशील प्रवृत्ति को भी कई बार स्वच्छंदता मान लिया जाता है या फिर स्वच्छंदता की आड़ में स्वतंत्रता पर बंधन लगाने की मानसिकता भी कार्य करती है। वस्तुतः स्वतंत्रता, स्वच्छंदता नहीं है बल्कि यह एक मर्यादा के भीतर अपने अधिकारों का सम्यक प्रयोग और कर्तव्यों का संतुलित निर्वहन है। नारी समाज का एक वर्ग ऐसा भी है जो अभी भी सिर से पाँव तक पूरे कपड़े पहने अपनी बौद्धिकता और जीवटता के दम पर समाज की रूढ़िगत वर्जनाओं को तोड़ने का साहस रखता है। वस्तुतः

भूमंडलीकरण के दौर में नारी अपनी शिक्षा एवं सजगता के चलते जहाँ आत्मविश्वास हासिल कर रही है, वहीं घरेलू उत्पीड़न, उपभोग्यता और उपयोगिता से मुक्ति के साथ-साथ अपनी स्वतंत्र अस्मिता व अस्तित्व के प्रश्न को एक नये सिरे से उठा रही है। स्त्री के इतिहास और मिथक में चित्रित रूपों से, अतिरंजना की परत को हटाकर नारीवादी विमर्श उसके यथार्थ को प्रस्तुत करता है।

आज नारी जीवन के हर क्षेत्र में कदम बढ़ा रही है। वह अपने कर्तव्यों को गृहकार्यों की इतिश्री ही नहीं समझती है, बल्कि अपने सामाजिक दायित्वों के प्रति भी सजग है। वस्तुतः समाज की यह पारंपरिक सोच कि महिलाओं के जीवन का अधिकांश हिस्सा घर-परिवार के मध्य व्यतीत हो जाता है और बाहरी जीवन से संतुलन बनाने में उन्हें समस्या आएगी, बेहद दकियानूसी लगती है। आज एक महिला घर में अकेले जितना कार्य करती है, उसका मोल कोई नहीं समझता। पुरुष इसे महिला की ड्यूटी मानकर निश्चिन्त हो जाता है। यह उस स्थिति में भी है जबकि महिला भी कमा रही होती है। आज जरूरत इस बात की भी है कि जी.डी.पी. में महिलाओं के कार्य की गणना हो और घरेलू कार्यों को हवा में न उड़ाया जाय। इस अवधारणा को बदलने की जरुरत है कि बच्चों का लालन-पोषण और गृहस्थी चलाना सिर्फ नारी का काम है। यह एक पारस्परिक जिम्मेदारी है, जिसे पति-पत्नी दोनों को उठाना चाहिए। इस बदलाव का कारण महिलाओं में आई जागरूकता है, जिसके चलते वे अपने को दोयम नहीं मानतीं और कैरियर के साथ-साथ पारिवारिक-सामाजिक परम्पराओं के क्षेत्र में भी बराबरी का हक चाहती हैं। अब वे स्वयं के प्रति सचेत होते हुए अपने अधिकारों के प्रति आवाज उठाने का माद्दा रखती हैं।

फेमिनिस्ट आन्दोलनों ने नगरीय जीवन में पली-बढ़ी महिलाओं पर तो प्रभाव डाला पर इधर जो एक नई प्रवृत्ति उजागर हुई है, वह है ग्रामीण अंचलों की अशिक्षित महिलाओं द्वारा रूढ़िवादी वर्जनाओं को तोड़कर नये प्रतिमान स्थापित करना। श्मशान में जाकर आग देने से लेकर महिलाएं वैदिक मंत्रोच्चारण के बीच पुरोहिती का कार्य करती हैं और विवाह के साथ-साथ शांति यज्ञ, गृह प्रवेश, मुंडन, नामकरण और यज्ञोपवीत भी करा रही हैं। राजनीति, प्रशासन, समाज, उद्योग, व्यवसाय, विज्ञान-प्रौद्योगिकी, फिल्म, संगीत, साहित्य, मीडिया, चिकित्सा, इंजीनियरिंग, वकालत, कला-संस्कृति, शिक्षा, आई. टी., खेल-कूद, सैन्य से लेकर अंतरिक्ष तक नारी ने छलांग लगाई है। नारी की नाजुक शारीरिक संरचना के कारण यह माना जाता रहा है कि वे सुरक्षा जैसे कार्यों का निर्वहन नहीं कर सकतीं। पर बदलते वक्त के साथ यह मिथक टूटा है। महिलाएं आज पुलिस, सेना, और अर्द्धसैनिक बलों में बेहतरीन तैनाती पा रही हैं। अब जागरूक नारी समाज की अवहेलना करना आसान नहीं रहा। आज वह स्वयं को सामाजिक पटल पर दृढ़ता से स्थापित करने को व्याकुल है। शर्मायी-सकुचायी सी खड़ी महिला अब रुढ़िवादिता के बंधनों को तोड़कर अपने अस्तित्व का आभास कराना चाहती है। महिलाओं को सम्पत्ति में बेटे के बराबर हक देने हेतु हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम में संशोधन, घरेलू महिला हिंसा अधिनियम, सार्वजनिक जगहों पर यौन उत्पीड़न के विरूद्ध नियम एवं लैंगिक भेदभाव के विरूद्ध उठती आवाज नारी को मुखर कर रही है। दहेज प्रथा, कन्या भ्रूण हत्या, बाल विवाह, शराबखोरी, लिंग विभेद जैसी तमाम बुराईयों के विरुद्ध नारी आगे आ रही है। ये सभी घटनाएं अधिकारों से वंचित नारी की उद्विग्नता को प्रतिबिंबित कर रही हैं।

वर्तमान समय में नारी अपनी सम्पूर्णता को पाने की राह पर निरंतर बढ़ रही है, ताकि समाज के नारी विषयक अधूरे ज्ञान को अपने आत्मविश्वास की लौ से प्रकाशित कर सके। नारी सृजन की प्रतीक है। हमारे यहाँ साहित्य और कला में नारी के कोमल रूप की कल्पना की गई है। कभी उसे कनक-कामिनी तो कभी अबला कहकर उसके रूपों को प्रकट किया गया है। पर आज की नारी इससे आगे है। वह न तो सिर्फ कनक-कामिनी है और न ही अबला, इससे परे वह दुष्टों की संहारिणी भी बनकर उभरी है। नारी की यौनिकता पर चोट करने वालों को नारियों ने करारा जवाब दिया है। वे नारी देह की बजाय उसके दिमाग पर जोर देती हैं। उनका मानना है कि दिमाग पर बात आते ही नारी पुरुष के समक्ष खड़ी दिखायी देती है, जो कि पुरुषों को बर्दाश्त नहीं। इसी कारण पुरुष नारी को सिर्फ देह तक सीमित रखकर उसे गुलाम बनाये रखना चाहता है। यहाँ पर अमृता प्रीतम की रचना 'दिल्ली की गलियाँ' याद आती है, जब कामिनी नासिर की पेंटिग देखने जाती है तो कहती है, 'तुमने वुमेन विद फ्लॉवर, वुमेन विद ब्यूटी या वुमेन विद मिरर को तो बड़ी खूबसूरती से बनाया पर वुमेन विद माइंड बनाने से क्यों रह गए।' निश्चिततः यह कथ्य पुरुष वर्ग की उस मानसिकता को दर्शाता है जो नारी को सिर्फ भावों का पुंज समझता है, एक समग्र व्यक्तित्व नहीं। दरअसल नारी को 'मर्दवादी यौनिकता' से परे एक स्वतंत्र व समग्र व्यक्तित्व के रुप में देखने की जरुरत है। आज जरूरत है नारी जाति की उपलब्धियों को पितृसतात्मक समाज में स्वीकार किया जाना और उनकी उपलब्धियों की हर कीमत पर रक्षा करते हुए विस्तार।

नारी अस्मिता और विमर्श के नये आयामों, सवालों को नारी आन्दोलन और वैचारिक संघर्ष के केन्द्र में लाकर नारी अपनी नयी पहचान बना रही है। इसमें कोई शक नहीं कि नारी अस्मिता और सशक्तिकरण के संघर्ष को प्रभावी बनाने के लिए जरूरी है कि नारी अपना पक्ष खुलकर रखे, और एक स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में अपनी स्थिति को जाने, उसे बदले और नये विकल्पों का निर्माण करे। नारी सशक्तिकरण के माध्यम से ही सामाजिक तानेबाने को और अधिक मजबूत किया जा सकता है। यह इक्कीसवीं सदी के बदलते समाज का जटिल यथार्थ है, जिसमें कोई फंतासी भरा नायक या प्रतिनायक नहीं बल्कि साधारण सी दिखने वाली तमाम नायिकाएं हैं जो मिलजुलकर अपने समय का आख्यान रच रही हैं।

लेख

प्रो. आरके जैन 'अरिजीत'

बड़वानी (मप्र)

tirkjain@gmail.com

नारी की यात्रा: प्राचीन गौरव से आधुनिक नवजागरण तक

नारी, वह अनमोल कृति है जो सृष्टि की जननी, संस्कृति की संरक्षिका और समाज के अस्तित्व की अमर धुरी है। भारतीय परंपरा में नारी को मात्र देवी के रूप में नहीं, बल्कि जीवन की चिरंतन चेतना और सृजनशील ऊर्जा के प्रतीक स्वरूप पूजा जाता है। वह विचार मात्र नहीं, अपितु समाज के उत्कर्ष, विकास और प्रगति का अमिट स्तंभ है। उसकी कोमलता में करुणा का निर्झर बहता है, तो उसकी अडिग दृढ़ता में असीम साहस की अग्नि प्रज्वलित रहती है। नारी अपने अनुपम गुणों से समाज को संवेदनशीलता, सहिष्णुता और मानवीय मूल्यों के प्रकाश से आलोकित करती है।

प्राचीन भारत में नारी का दिव्य और सम्मानित स्थान

प्राचीन भारत में नारी को उच्चतम सम्मान और गरिमा का पद प्राप्त था। वैदिक युग में स्त्रियाँ विद्या, कला, विज्ञान, और राजनीति के विविध क्षेत्रों में निष्णात थीं। गार्गी की प्रखर तर्कशक्ति, मैत्रेयी की वैदिक विद्वत्ता और अपाला के अद्वितीय ज्ञान ने समाज के बौद्धिक परिदृश्य को एक नवीन दिशा प्रदान की। उस काल में नारी स्वतंत्र विचारों की धनी, आत्मनिर्भर और स्वाभिमानी थी। उसकी उपस्थिति केवल परिवार तक सीमित न होकर समाज के हर निर्णायक मंथन में मुखर थी। स्त्रियाँ यज्ञों, सभाओं और शास्त्रार्थों में सक्रिय भागीदारी निभाती थीं, जो उनके बौद्धिक अधिकारों और सामाजिक गरिमा के जीवंत प्रमाण थे। परंतु समय के प्रवाह के साथ सामाजिक संरचना में परिवर्तन आया, और रूढ़ियों की जकड़न ने नारी के अधिकारों और स्वतंत्रता को सीमित कर दिया। पितृसत्तात्मक व्यवस्थाओं और परंपरागत बंधनों ने नारी की स्वतंत्र पहचान को बाधित किया।

आधुनिक युग में नारी: नवजागरण और सशक्तिकरण की ओर

समय के चक्र के साथ, नारी ने पुनः अपनी अंतर्निहित शक्ति अदम्य साहस को स्थापित किया है। आज की नारी मात्र घरेलू सीमाओं में बंधी नहीं है; वह राजनीति, विज्ञान, खेल, व्यापार, और कला के हर आयाम में अपनी अमिट छाप अंकित कर रही है। इंदिरा गांधी की करिश्माई नेतृत्व क्षमता, किरण बेदी का निर्भीक साहस, कल्पना चावला और सुनीता विलियम्स की आकाशगामी उपलब्धियाँ, तथा पी.वी. सिंधु और मिताली राज की खेल जगत में गौरवशाली विजय इस सत्य के प्रमाण हैं कि नारी शक्ति असीमित है। आधुनिक राजनीति में द्रौपदी मुर्मू का राष्ट्रपति पद पर आरूढ़ होना और सुमित्रा महाजन की प्रखर संसदीय नेतृत्व क्षमता यह दर्शाती है कि नारी अब सीमाओं को लांघ चुकी है और समाज के हर निर्णायक क्षेत्र में प्रभावी भूमिका निभा रही है।

आज की नारी वैज्ञानिक अनुसंधान, उद्यमिता, पर्यावरण संरक्षण, तकनीकी नवाचार, और वैश्विक कूटनीति में भी अपनी विशिष्ट पहचान स्थापित कर रही है।

नारी: संस्कारों की चिरंतन वाहक और समाज की आत्मा

नारी शक्ति का महत्व केवल उसकी व्यक्तिगत उपलब्धियों में ही नहीं निहित है, अपितु वह समाज में सहिष्णुता, करुणा, समानता और प्रेम के चिरस्थायी मूल्यों की वाहक है। एक सशक्त नारी परिवार की रीढ़ होती है और उसकी शिक्षित सोच पूरे समाज को प्रगति के पथ पर अग्रसर करती है। नारी की शिक्षा, स्वास्थ्य, और आर्थिक स्वावलंबन किसी भी राष्ट्र के सतत विकास का मूलाधार हैं। वह संस्कारों की आधारशिला है, जो परिवार और समाज के मध्य संतुलन और सामंजस्य स्थापित करती है। नारी में मातृत्व की कोमलता के साथ ही नेतृत्व की अडिग दृढ़ता समाहित होती है। वह प्रेम, अनुशासन, त्याग और धैर्य के अद्भुत समन्वय का मूर्त स्वरूप है, जो समाज के सर्वांगीण विकास का आधार है।

नारी संघर्ष: चुनौतियाँ और उनकी अविचल विजय

आज की नारी को अनेक विकट चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, जैसे लिंग भेदभाव, उत्पीड़न, शिक्षा का अभाव और आर्थिक पराधीनता। परंतु नारी शक्ति का मूल मंत्र है - साहस, आत्मबल और आत्मनिर्भरता। नारी में वह अद्वितीय ज्वाला है, जो विषम परिस्थितियों को भी अपने धैर्य और प्रखरता से परास्त कर देती है। समाज में जागरूकता और संवेदनशीलता का संचार कर इन बाधाओं का उन्मूलन संभव है। घरेलू हिंसा, कार्यस्थल पर उत्पीड़न, और बाल विवाह जैसी कुप्रथाएँ आज भी समाज के कुछ कोनों में व्याप्त हैं, जिनसे संघर्ष हेतु कठोर विधियों के साथ-साथ जन -जागरण भी अनिवार्य है।

नारी सशक्तिकरण: एक व्यापक सामाजिक संकल्प

नारी सशक्तिकरण केवल सरकारी अभियानों जैसे 'बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ' तक सीमित नहीं रह सकता। यह एक व्यापक सामाजिक संकल्प है, जो तभी साकार होगा जब समाज की सोच में क्रांतिकारी परिवर्तन आएगा। नारी को उसकी प्रतिभा और क्षमता के अनुरूप समान अवसर और प्रतिष्ठा प्रदान करना आवश्यक है। शिक्षा, स्वास्थ्य, और रोजगार के क्षेत्र में समानता ही नारी सशक्तिकरण का सच्चा प्रतिरूप है। साथ ही, समाज में लैंगिक समानता की चेतना जाग्रत करना और पारंपरिक बंधनों को तोड़ना अनिवार्य है। महिलाओं को उद्यमिता, नेतृत्व और नवाचार के क्षेत्रों में प्रोत्साहित करना सशक्तिकरण के मूल स्तंभ हैं। नारी के अधिकारों की सुरक्षा हेतु विधायी सुधार, सुदृढ़ सुरक्षा उपाय और सामाजिक सहयोग तंत्र की आवश्यकता है।

नारी शक्ति का सम्मान - प्रगति का सत्य पथ

नारी शक्ति मात्र एक विचारधारा नहीं, बल्कि समाज की चेतना है। नारी के बिना समाज अधूरा और राष्ट्र अपूर्ण है। नारी का सम्मान और सशक्तिकरण न केवल उसका मौलिक अधिकार है, बल्कि समाज का परम कर्तव्य भी है। जब नारी सशक्त होगी, तभी समाज और राष्ट्र उन्नति के शिखर पर आरूढ़ होंगे। नारी शक्ति के मर्म को आत्मसात करना और उसे जीवन में उतारना ही वास्तविक प्रगति का प्रतीक है। नारी का सम्मान समाज के नैतिक मूल्यों की असली पहचान है। नारी सशक्तिकरण का उद्देश्य केवल अधिकार प्रदान करना नहीं, बल्कि उसकी गरिमा, स्वतंत्रता और आत्मनिर्भरता को सुनिश्चित करना है। नारी के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण, शिक्षा और समान अवसर प्रदान कर हम एक समृद्ध, न्यायपूर्ण और प्रबुद्ध समाज के निर्माण की आधारशिला रख सकते हैं। जब नारी आगे बढ़ेगी, तभी उज्ज्वल और प्रगतिशील भविष्य की परिकल्पना साकार होगी।

काव्य

डॉ प्रियंका भट्ट
उदयपुर राजस्थान

आया फागुन द्वार

गली मुहल्ले झूम उठी
फागों की टोली यार
ढ़ोल चांग की थाप पे देखो
झूम उठे सब यार
प्रीत का पक्का रंग लगाने
आया फागुन द्वार
कि आया होली का त्योहार आया होली का त्यौहार
रंगों की बरसात में भीगा
है सारा संसार

होली के बन गए बहाने
आज मिले हैं यार पुराने
भँग तरंग में झूम झूमकर
गीत प्रेम के लगे हैं गाने
जीवन ईक उत्सव है, लेकर
आया रंग हजार
रंगों की बरसात में भीगा है सारा संसार

लाल गुलाबी नीले पीले
चेहरे हो गए रंग- रंगीले
कोई पीकर मस्त पड़ा है
अपनी धुन में कोई अड़ा है
रंग भरे जीवन से लेकर
खुशियों की बौछार
रंगों की बरसात में भीगा है सारा संसार

द्वेष भावना छुपी जो अंतर
जल गई होली दहन के अंदर
दंभ किसी का टिका कहाँ है
विजय प्रेम की हुई सदा है
अंतर्मन का मैल छुड़ा, लेकर
अपनो का प्यार
रंगोंकी बरसात में भीगा है
सारा संसार

लेख

गिरेन्द्रसिंह भदौरिया "प्राण"
"वृत्तायन" 957, स्कीम नं. 51, इन्दौर-6

कविता की परिभाषा आज तक नहीं हो सकी

संस्कृत के आचार्यों ने काव्य के जो लक्षण बताए हैं, वे कविता के लक्षण नहीं हैं। बहुत से साहित्यकार इन्हें कविता के लक्षण मान बैठते हैं। सच पूछो तो आज तक कोई भी विद्वान कविता की सही और सटीक परिभाषा नहीं कर सका है। भारतीय व पाश्चात्य कई विद्वानों ने इस सम्बन्ध में अपने- अपने मत व्यक्त किए हैं, पर वे मात्र एक विचार बनकर रह गए हैं। ये विचार सर्वमान्य तो क्या बहुमान्य भी नहीं हुए। कविता का क्या लक्षण है? यह प्रश्न आज भी अनुत्तरित है।

काव्य के तीन भेद होते हैं- गद्य, पद्य और चम्पू। इसी में साहित्य की सभी विधाएंँ समाहित हैं। कविता पद्य का रूप है और काव्य समग्र का। पहले काव्य और कविता के अन्तर को बहुत ही सरल उदाहरण से समझते हैं। जैसे हर बरगद एक वृक्ष तो है लेकिन हर वृक्ष बरगद नहीं होता। उसी प्रकार हर कविता काव्य तो होती है पर हर काव्य कविता नहीं होता। जब गद्य और पद्य में स्पष्ट भेद है तो कविता का लक्षण काव्य से पृथक ही होना चाहिए। इसीलिए कह रहा हूँ कि- कविता क्या है व कैसी होती है ? इस प्रश्न का कोई स्थाई समाधान जिज्ञासुओं को नहीं मिला है।

कविता तो सरस्वती की मुखरा बेटी है, उसका जन्म न होकर अवतरण होता है। भारतीय संस्कृति से इतर संस्कृतियों में भी इसे लिखना सामान्य नहीं माना गया है। अँग्रेजी में इसे गॉड गिफ्ट माना जाता है। अँगरेजी में कविता का सन्दर्भ लिखते समय इसे "दिस पोइम इज कम्पोज्ड बाय जाॅन कीट्स" ऐसा लिखा जाता है "दिस पोइम इज रिटन बाय जाॅन कीट्स" नहीं लिखा जाता। यहाँ रिटन (लिखित) नहीं अपितु कम्पोज्ड शब्द का प्रयोग किया जाता है। उर्दू में भी इसे इलहाम माना गया है। "यह ग़ज़ल कही है" "एक शे'र कुछ यूँ हुआ है" कहा जाता है। "यह ग़ज़ल लिखी है" या "एक शे'र कुछ यूँ लिखा है" नहीं कहा जाता। हिन्दी में भी इसे ईश्वरीय देन कहा जाता है। कविता का अवतीर्ण होना ही इसे अवतरण बनाता है। अन्त में हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कविता लिखी नहीं जा सकती। कविता से इतर काव्य की विभिन्न विधाओं के रचनाकारों को उपन्यासकार, कहानी कार, नाटककार, कलाकार आदि संज्ञाओं से पुकारा जाता है वहीं कविता के रचनाकार को कविताकार नहीं कहा जाता है अपितु कवि की संज्ञा से विभूषित किया गया है। यहाँ तक कि कलमकार या लेखक भी नहीं कहा जाता है। रही बात धर्म निरपेक्ष कलमकारों की तो जो ईश्वर में आस्था नहीं रखते ऐसे में वे इसे गाॅड गिफ्टेड कैसे मानेंगे?

कविता अवतरण है तो फिर एक कवि दिए गए विषयों पर रचना कैसे कर देता है? तत्काल समस्या पूर्ति कैसे कर देता है? आशुकविता कैसे हो जाती है? आपके मन मस्तिष्क में इस तरह के प्रश्न उठना स्वाभाविक हैं। इसके उत्तर में कहना चाहता हूँ कि- दक्ष कवियों को अभ्यास और अनुभव के द्वारा कविता को अवतरित कराने की अद्भुत क्षमता स्वत: प्राप्त हो जाती है। वे शब्दों और भावों में गहरे डूबने की शक्ति प्राप्त कर चुके होते हैं। उनके भाव आह्वान की सहायता से उद्वेग साकार होकर प्रकट होता रहता है।

कविता में भाषा का सौंदर्य, नाद का निनाद और अर्थ का गाम्भीर्य रहस्यमय होता है। इसमें भाव की अद्भुत संप्रेषणीय शक्ति होती है, जो रोचक और सरस होने से सीधे हृदय में उतरती है और आत्मा को जाग्रत करती है। कविता सत्य को सुन्दर बनाते हुए शिव (कल्याण) की भावना को पोषित और अभिव्यक्त ही नहीं करती अपितु जीवन को अर्थ भी देती है। कविता ही जीवन की गहराई को व्यक्त करती है। जटिल होने के कारण इसकी व्याख्या ही इसकी व्यापकता को उजागर करती है। सरल होने के कारण यह कण्ठ की सहज शोभा बन जाती है। कवि अपनी अनुभूति, भावना, रूप, लय,अर्थ और संदेश को व्यक्त करने के लिए शब्दों का चयन और विन्यास तो करता है लेकिन उसे कल्पना लोक की यात्रा करनी पड़ती है।

विश्व के विद्वानों में कविता की उपयोगिता के विमर्श पर उसके खण्डन व मण्डन होते रहे हैं। प्लेटो जैसे दार्शनिक समाजशास्त्री इसे समाज के लिए आवश्यक नहीं मानते वहीं भारतीय विद्वानों ने इसकी महती आवश्यकता पर बल दिया है। यहाँ एक बात और बताना चाहूँगा कि कवि तथ्यगत सत्य को सुन्दर बनाने के लिए भावों में काल्पनिक संवेदना का आलोढ़न भी करता है वहीं कविता को शब्द शक्तियों रस छन्द अलंकारादि से शृंगारित भी करता है तब सत्य प्रभावित होता है और वह कथन पूर्ण सत्य नहीं रह पाता। प्लेटो ने शायद इसलिए भी कविता को समाज के लिए आवश्यक नहीं माना है। अतः प्लेटो ने समाज में कविता की उपस्थिति का खण्डन किया है वहीं उनके शिष्य अरस्तू ने कविता के शिवत्व (हितकारी पक्ष) को स्वीकारते हुए उसे समाज के लिए अति आवश्यक माना व उसकी महिमा का मण्डन किया है।

हाजिर जबाबी, वाक्चातुर्य, क्रमबद्ध आलेखन, संगीत में अगेय को गेय की तरह प्रस्तुत कर देना, स्मृतियों के बल पर त्वराशक्ति का आब्रजन, मिमिक्री, प्रत्युत्पन्नमति प्रभा आदि शक्तियाँ तो कथन की तीक्ष्णता के तेवर की जननी हैं। ये अवतरण न हो कर स्थिति पर उपजे आवेग के प्रवाह मात्र हैं। इन तेवरों से सम्पन्न आभा का मण्डल बनाना कविता के कवि की पहचान का स्थाई लक्षण नहीं हो सकता। अतः विद्वत्ता की समकालीन आभा का आतंक भले ही किसी तथाकथित कवि के मन में महाकवि होने के भ्रम का संचरण कर दे फिर भी वह कुछ समय के लिए ही होगा। वह चिरकाल के लिए कविता का कवि नहीं हो सकता।

शब्द ब्रह्म है तो कविता ब्रह्मनादिनी है। वह समूचे साहित्य का अर्क होती है। काव्य अंशी है तो कविता उसका अंश होती है। इसका आशय यह नहीं कि कविता का कद लघुतर है। सूत्रबद्ध होने से सन्दर्भ और प्रसंग सहित इसकी व्याख्या विशद हो जाती है। कविता के अस्तित्व और उसकी श्रेष्ठता का वर्चस्व हर युग में रहा है। कविता का क्षेत्र बहुत विस्तृत है तो प्रभाव भी विश्वव्यापी है। इसीलिए गद्य के कई विद्वान लेखकगण काव्य के कवि होते हुए भी मन में कविता के कवि होने की प्रच्छन्न चाह रखते हैं। तथाकथित कविता को छोड़ दें तो असली कविता का एक गुण यह भी है कि यह अत्यन्त सहज है और वहीं वही कविता अति गूढ़ भी। अनुभूति और अभ्यास की पराकाष्ठा में समाधिस्थ कवि के मानस से कविता का आविर्भाव होता है, यह अवतरण है, यह सृजन नहीं है। वह गार्भिकी न होकर हार्दिकी व बौद्धिक है। गाली से लेकर आमन्त्र रसवर्षा अलंकार प्रक्षेपण, छन्द बन्धन आदि इसे भव्य और दिव्य बनाते हैं। यथास्थिति शब्दशक्तियो का आलोढ़न विषय की गम्भीरिमा में चार चाँद लगाता है। इन्हीं अनगिनत विशेषताओं के कारण ही कविता को छोटी-मोटी परिभाषा में नहीं बाँधा जा सकता है। सम्भवतः इसी कारण कविता को आज तक परिभाषित नहीं किया जा सका है।

छन्द हीन विचारों के संयोजनकर्ता नई कविता के पक्ष में मिथ्या और अविश्वसनीय तर्क देते हैं। अधिकांश के अनुसार आज की कविता तो प्रगति शील होकर नए रूपों में आई है। इसे समाज में व्यापक समर्थन प्राप्त है। पाठक और श्रोता इससे अभिभूत हैं। गीत मर गया है। छन्द जीवित नहीं है। पुराने घिसे पिटे परम्परागत कवियों की कविता को कोई सुन ही नहीं रहा है। सूर, तुलसी, मीरा, रैदास पर धार्मिक होने का आरोप लगाकर उनके काव्य को कविता से खारिज करते हैं।

परम्परागत विद्वानों की दृष्टि में छन्द मुक्त रचनाओं को काव्य तो कहा जा सकता है किन्तु कविता कहना नासमझी होगी। जैसे हाथी के आकार में रँगे चित्र को अश्व नहीं कहा जा सकता और न ही घोड़े की पीठ पर बैल का ठाँठा लगा देने से वह बैल हो जायेगा। जैसे बिना आवरण के चावल की बीज शक्ति समाप्त हो जाती है। वैसे ही छन्द मुक्त रचना की रोचकता समाप्त हो जाती है। कोई जीव बिना आवरण के नहीं हो सकता। गुण, धर्म, रूप और आवरण के पृथक् होने से सम्बन्धित हर वस्तु या जीव की पहचान और नाम भी पृथक् ही हो जाता है। गेंहूं को गेंदा नहीं कहा जा सकता। फिर काव्य को कविता कैसे कहा जा सकता है।

वास्तविकता तो यह है कि छन्द से मुक्त भाव को कविता के रूप में स्वीकार करना कविता के मूल तत्वों से भटकाव का संकेत है। हां इस प्रकार के काव्य का सृजन करने वाले को काव्य का कवि होना तो स्वीकारा जाता है, परन्तु उसे कविता का कवि नहीं माना जा सकता।

कविता के प्राकृतिक कवि प्रायः निश्छल होते हैं। भोलापन उनको उद्वेलित नहीं होने देता। उन पर कविता का नशा चढ़ा हुआ रहता है। उनका फक्कड़पन, अक्खड़पन, अपनी मस्ती में मस्त रहने की प्रकृति और जुनूनी दीवानगी उन्हें समाज में विशिष्ट बनाती है। वे सीधे सादे होते हैं, चालाकी उनमें औसतन नहीं पाई जाती व अवसरवादिता की समझ भी उन्हें नहीं के बराबर होती। वे सुहृद होते हैं इन्हीं गुणों के कारण वे किसी का लाभ नहीं ले पाते और हमेशा के लिए पीछे रह जाते हैं। यह साधु प्रकृति सभी में पाई जाती हो ऐसा भी नहीं है किन्तु अधिकांश में उक्त सद्गुण मिलते ही हैं वहीं तुलना करने पर हम पाते हैं कि अधिकांश विद्वानों में चालाकी पाई जाती है वे अवसरवादी भी होते हैं। देखने में तो बहुत सीधे-सादे लगते हैं किन्तु ये इतने भोले होते नहीं हैं। हाँ ये दुर्गुण सभी विद्वज्जनों में नहीं मिलते। फिर भी कुछ में मिलेंगे और इन्हीं कुछ के कारण सभी लपेटे में आ जाते हैं।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के कुछ समय बाद से ही देश के पारदेशीय साम्य सोच के विद्वानों की आभा ने छल बल से सरकारी संस्थानों अखबारों और मीडिया पर अपना ऐसा प्रभाव बना लिया था कि कविता को कविता न रहने दिया। इसे

नई कविता का नाम दे दिया गया। नई कविता में गेयता, तुक, छन्द आदि को कोई स्थान ही नहीं था। लयबद्धता को स्वीकार तो किया किन्तु भावों के बन्धन से प्रायः लय लुप्त ही रही। परिणाम यह हुआ कि गद्य ही तथाकथित कविता हो गया। संगीत का फीडबैक ही समाप्त सा कर दिया गया।इस प्रकार जितने भी गद्य के विद्वान थे, वे कविता के कवि बन बैठे। जो कवि नहीं थे, उन्हें असली कवि होने के अघोषित प्रमाण पत्र दे दिए गए। सरकारी पुरस्कारों सम्मानों पर इनका नियन्त्रण हो गया। कौओं की कांँव-काँव को कोयल की किलकारी से अधिक कर्णप्रिय माना गया। गेयता शिथिल पड़ गई, संगीत विषाद में आ गया और वह कबीर मीरा सूर तुलसी तक को ही संगीत बद्ध करता रहा। वास्तविक कवि अपनी साधना में खो गए। यद्यपि आज भी कमोवेश स्थिति वही है और कुछ उच्च निर्णायक पदों पर पदस्थ विद्वान अधिकारी साहित्य की श्रेष्ठता पर नहीं अपितु अपने आत्मीय सम्बन्धों पर ध्यान देते हैं और अपनों को ऑब्लाइज करते रहते हैं।

आज सोशल मीडिया का समय है। मौन मुखर हो चुका है। बिगड़े राग बन रहे हैं। प्रचुर मात्रा में छन्दों का अवतरण हो रहा है। गायन को आधार मिलने से संगीत को ऊर्जा मिली है। आशा की किरण पुनः ऐसी जगी है कि
जब तक मनुष्य में संवेदनशीलता हृदयस्थ है तब तक कविता को अँधेरी रात का सामना नहीं करना पड़ेगा अवतरण होता ही रहेगा और होना भी चाहिए।

लघुकथा

सम्मान और सामान

रामपियारी हैरान थी। उसका मरद सुभाष दो साल से बंद पड़े कमरे की चाभी ढूंढ रहा था। चाभी नहीं मिली तो ताला तोड़ने के लिए हथौड़ा ले आया। रामपियारी झल्लाहट में बोली- 'सबेरे-सबेरे बावला काहे हो रहे हो? जो कोठरी दो साल से नहीं खुली, आज कौन जरूरत आन पड़ी। कोई खरीददार मिल गया है का?' सुभाष का हाथ रूक गया। गुस्से से पत्नी की ओर देखा। रामपियारी घबरा गई। डरते-डरते बोली - वो मिल गई का? कहाँ है वो? 'सुभाष ने जवाब में जोर का हथौड़ा मारा और ताला चट से कर के टूट गया। कमरे में रखे धूल धूसरित सामानों को गमछे से पोंछने लगा।

रामपियारी ने फिर कहा -' बेचना है? हम तो कहते हैं बेच डालो सब। एक घर का कोना घेर कर रखा है। ऊपर से बंद पड़े-पड़े कोठरी भी खराब हो रही है। इससे पहिले की सब सामान में घून लग जाए, बेच दो। 'सुभाष चिल्लाया - 'ये सामान मैंने बेचने के लिए नहीं उसकी लाश जराने के लिए रखा है।'रामपियारी सहम गई -' तो फिर आज पोंछ काहे रहे हो? वो मिल गई?

'

सुभाष सोच में पड़ गया। कई सालों में एक-एक कर उसने अपनी मुनिया बेटी के दहेज के लिए ये सब इकट्ठा किया था। सोचा था बेटी को इतना सामान दूंगा कि बिरादरी वाले देखते रह जाएंगे। मगर वो मुख पर कालिख पोत कर चली गई। भाग गई गैर बिरादरी के छोकरे के साथ। सुभाष ने तब प्रतिज्ञा कर ली कि जिस दिन वो मिलेगी, उसको मार कर इन्हीं फर्नीचर की लकडियों से उसकी लाश जलाएगा। तब से ये सारा सामान एक कोठरी में बंद था। रामपियारी सुभाष की प्रतिज्ञा वाली बात जानती थी। आज इन समानों को झारते-पोंछते देखकर सहम गई। उसका हृदय भयभीत था कि सुभाष को बेटी का ठिकाना मालूम हो चुका है और वह उसे आज मार देगा। परंतु, वह विवश थी, अपनी बेटी को बचाने के लिए कुछ कर भी नहीं सकती थी। थोड़ी ही देर बाद सुभाष भाड़े की एक ट्रॉली में सारा सामान लाद कर चल पड़ा। रामपियारी के मन में नाना प्रकार के आशंकाओं ने घर कर लिया था। तरह-तरह के बुरे ख्याल आ रहे थे। पहले तो गांव के हर जान-पहचान वाले के पास जाकर अपने ही मर्द का पता करती रही। वो संतोष के बाबू, वो रानी के भैया, वो रमेश की चाचा, मुनिया के बाबू कहाँ गये जानते हो? मगर जब कोई जवाब नहीं मिला तो ईश्वर के शरण में गयी। गांव के हर देव स्थान पर माथा टेक आयी। हर किले-चबूतरे पर गिरकर मन्नत मांग आयी कि उसकी बेटी मुनिया की जान बच जाए और अंत में थक हार कर घर के एक कोने में सुबकते हुए बैठ गई। रोते-रोते न जाने कब आँख लग गई। घंटो सोती रही और गाल पल आंसुओं की धार बहती रही। गोधूलि के वक्त सुभाष ने उसे झकझोरा तो चौंक कर उठी और उसकी छाती से लिपट कर जोर-जोर से रोने लगी। मुनिया के बाबू तुमने उसे मार कर जरा दिया क्या?

सुभाष की आंखों से आंसुओं की अविरल धारा बहने लगी। बोला- सोच कर चला तो यही था मगर उस लड़के के साथ उसको खुश देखकर मन बदल गया। देखा कि अभाव में है, सोने को बिस्तर नहीं, खाना बनाने के लिए बर्तन नहीं, ओढ़ने के लिए कंबल नहीं, बैठने के लिए कुर्सी नहीं, फिर भी दोनो खुश हैं। अभाव में उनका भाव देखकर मेरा इरादा कमजोर पड़ गया और जो सामान मैंने बेटी की लाश जराने के लिए रखा था, उसे दहेज में दे आया, साथ में महीने भर का राशन भी। रामपियारी सुभाष से लिपट कर जोर-जोर से रोने लगी। मुनिया के बाबू तुम आदमी नहीं भगवान हो।

दीपक कुमार

व्यंग्य

विवेक रंजन श्रीवास्तव
ए २३३ , ओल्ड मीनाल रेसीडेंसी , भोपाल ४६२०२३

कर क्या लोगे , बुरा मान भी गए जो

बुरा न मानो होली है कहकर , बुरा मानने लायक कई वारदातें हमारे आपके साथ घट जाती हैं. होली हो लेती है . सबको अच्छी तरह समझ आ जाना चाहिये कि बुरा मानकर भी हम सिवाय अपने किसी का कुछ बिगाड़ नहीं सकते .बुरा तो लगता है जब धार्मिक स्थल राजनैतिक फतवे जारी करने के केंद्र बनते दिखते हैं . अच्छा नहीं लगता जब सप्ताह के दिन विशेष भरी दोपहर पूजा इबादत के लिये इकट्ठे हुये लोग राजनैतिक मंथन करते नजर आते हैं . बुरा लगता है जब सोशल मीडीया की ताकत का उपयोग भोली भीड़ को गुमराह करने में होता दिखता है . बुरा लगता है जब काले कपड़े में लड़कियों को गठरी बनाने की साजिश होती समझ आती है . बुरा लगता है जब भैंस के आगे बीन बजाते रहने पर भी भैंस खड़ी पगुराती ही रह जाती है . बुरा लगता है जब मंच से चीख चीख कर भीड़ को वास्तविकता समझाने की हर कोशिश परिणामों में बेकार हो जाती है . इसलिये राग गर्दभ में सुर से सुर मिलाने में ही भलाई है . यही लोकतंत्र है . जो राग गर्दभ में आलाप मिलायेंगे , ताल बैठायेंगे , भैया जी ! वे ही नवाजे जायेंगे .

जो सही धुन बताने के लिये अपनी ढ़पली का अपना अलग राग बजाने की कोशिश करेंगे , भीड़ उन्हें दर किनार कर देगी . भीड़ के चेहरे रंगे पुते होते हैं . भीड़ के चेहरों के नाम नहीं होते . भीड़ जिससे भिड़ जाये उसका हारना तय है . लोकतंत्र में भीड़ के पास वोट होते हैं और वोट के बूते ही सत्ता होती है . सत्ता वही करती है जो भीड़ चाहती है . भीड़ सड़क जाम कर सकती है , भीड़ थियेटर में जयकारा लगा सकती है , भीड़ मारपीट , गाली गलौज , कुछ भी कर सकती है .

फ्री बिजली , फ्री पानी , फ्री राशन और मुफ्तखोरी के लुभावने वादों को विकास बताकर भीड़ खरीदना लोकतांत्रिक कला है . कहीं लाडली बहन बनाकर तो कहीं ,बेरोजगारी भत्ते , मातृत्व भत्ते , कुपोषण भत्ते, उम्रदराज होने पर वरिष्ठता भत्ते जैसे आकर्षक शब्दों के बैनरों से बनी योजनाओ से बिन मेहनत कमाई के जनोन्मुखी कार्यक्रम भीड़ को वोट बैंक बनाये रखते हैं. भीड़ बिकती समझ आती है पर बुरा मानकर भी कर क्या लोगे !

खरीदने बिकने के सिलसिले मन ही मन समझने के लिये होते हैं , बुरा भला मानने के लिये नहीं . खिलाड़ियो को नीलामी में बड़ी बड़ी कीमतों पर सरे आम खरीद कर , एक रंग की पोषाक की लीग टीमें बनाई जाती हैं . मैच होते हैं , भीड़ का काम बिके हुये खिलाड़ियों को चीयर करना होता है . चीयर गर्ल्स भीड़ का मनोरंजन करती हैं .

भीड़ में शामिल हर चेहरा व्यवस्था की इकाई होता है . ये चेहरे सट्टा लगाते है , हार जीत होती है करोड़ो के वारे न्यारे होते हैं . बुद्धिमान भीड़ को हांकते हैं . जैसे चरवाहा भेड़ों को हांकता है . भीड़ को भेड़ चाल पसंद होती है .

भीड़ तालियां पीटकर समर्थन करती है . काले झंडे दिखाकर , टमाटर फेंककर और हूट करके भीड़ विरोध जताती है . आग लगाकर , तोड़ फोड़ करके भीड़ , जाने कहां गुम हो जाती है . भीड़ को कही गई कड़वी बात भी किसी के लिये व्यक्तिगत नहीं होती .

भीड़ उन्मादी होती है . भीड़ के उन्माद को दिशा देने वाला जननायक बन जाता है . भीड़ के कारनामों का बुरा नहीं मानना चाहिये , बल्कि किसी पुरातन संदर्भ से गलत सही तरीके से उसे जोड़कर सही साबित कर देने में ही वाहवाही होती है . भीड़ प्रसन्न तो सब अमन चैन . सो बुरा न मानो , होली है , और जो बुरा मान भी जाओगे तो कुछ कर न सकोगे क्योंकि तुम भीड़ नही हो , और अकेला चना भाड़ नही फोड़ सकता . इसलिये भीड़ भाड़ में बने रहो , मन लगा रहेगा . भीड़ कुंभ नहाती है, मन चंगा तो कठौती में गंगा भीड़ नहीं मानती . ऐसा कहोगे तो ट्रोल हो जाओगे . इसलिए भीड़ के संग डुबकी लगाने में ही भला है.

संस्मरण

कनक किशोर
रांची, झारखंड.

स्मृतियों में बसा: पेंच टाइगर रिजर्व

छोड़ जाता है अपनी यादें, बस जाता है वो दिल में कोई जगह खास, कोई इंसान और किसी का प्यार.

ये एक सच्चाई है जिसे झुठलाया नहीं जा सकता. मेरा कोई खास शौक नहीं है लेकिन प्रकृति, अध्यात्म और गांव से मेरा स्वाभाविक जुड़ाव रहा है. प्रकृति और गाँव के बीच इस निकट संबंध के कारण मैं अपनी नौकरी और जीवन की हलचल के बीच भी एक महीने की ई एल लेकर हर साल पन्द्रह दिन देशाटन में और पन्द्रह दिन गाँव में बिताता था. भले ही चालीस साल वन सेवा का वन एवं वन्य प्राणियों के बीच बीता फिर भी जंगल से मन नहीं भरा. विश्व प्रसिद्ध साल वन 'सारंडा' से अपनी वन सेवा शुरू करना मेरे लिए सौभाग्य की बात थी. जंगल से यह निकटता ही है जो मुझे प्रकृति, परिवेश, पर्यावरण और गांवों के बारे में साहित्य में बात करने को मजबूर करती हैं चाहे - अनचाहे पद्य और गद्य में. दरकती हिमालय, बिखरते गांव, लुप्त होते जंगल, सूखते नदी, बालू की लूट, बिगड़ती परिवेश देखकर आंखों में लोर आ जाता है, जो शब्द रूप में कविता, कहानी, आलेख के रूप में सामने आ जाता. मैंने 1986-88 बैच में राज्य वन सेवा महाविद्यालय, बर्निहाट (गौहाटी) से एक वन अधिकारी के रूप में प्रशिक्षण लिया था. देश के विभिन्न राज्यों से चालीस प्रशिक्षु प्रशिक्षण में मेरे साथ थे. दो साल एक साथ और एक सेवा में रहने के कारण सब आपस में एक परिवार की तरह बन गये थे. हम सभी आपस में सोशल मीडिया पर जुड़े हुए थे लेकिन काम की व्यस्तता और जीवन की आपाधापी में कुछ लोगों को छोड़कर किसी से मिलना नहीं हुआ था. जब तीन साल पहले सेवानिवृत्ति के बाद एक-दूसरे से मिलने के लिए रणथंभौर में एक बैचमेटस मीटिंग निर्धारित की गई थी, तो मैं अपनी भागीदारी तय करने के बावजूद कोरोनोवायरस की तीसरी लहर की आशंका के कारण इसमें शामिल नहीं हो सका. इस वर्ष, 23.10.2024 से 25.10.2024 तक पेंच टाइगर रिजर्व, मध्य प्रदेश में एक बैचमेट्स मीट आयोजित की गई तब मुझे इसका हिस्सा बनने का अवसर मिला.इस बैचमेट्स मीट में इंतजार था छतीस वर्षों बाद अपने बैचमेट्स से मिलने का एक तरफ तो दूसरी ओर पेंच व्याघ्र आरक्ष्य के सुंदर प्रकृति,, वन एवं वन्यजीव से मुलाकात का. वह इंतजार समाप्त हुआ दिनांक 23.10.2024 को बारह बजे दिन में पेंच व्याघ्र आरक्ष्य के तुरिया गेट स्थित किपलिंग कोर्ट रिसोर्ट पहुंचने पर.

23.10.2024 की सुबह रांची से ट्रेन द्वारा नागपुर पहुंचने पर बिहार के अपने बैचमेट लल्लन झा से नागपुर स्टेशन पर मिला और उनके साथ कार से तुरिया किपलिंग कोर्ट रिसोर्ट गए, जहां रिसोर्ट प्रबंधन ने गुलदस्ते और स्वागत पेय के साथ हमारा गर्मजोशी से स्वागत किया. दोस्तों, यह रिसॉर्ट प्रकृति की गोद में स्थित है एवं मध्यप्रदेश पर्यटन का रिसॉर्ट है। पेड़-पौधों के बीच नदी के

किनारे स्थित रिसोर्ट के कॉटेज पहली नज़र में मंत्रमुग्ध कर दिया. हम आवंटित काॅटेज में गए तथा स्नान कर भोजन कक्ष में पहुंचे और भोजन करने के पाश्चात्य आराम करने का निर्णय लिया. उस दोपहर कोई विशेष कार्यक्रम निर्धारित नहीं था. साथी धीरे-धीरे एकत्र हो रहे थे. एक-दो को छोड़कर सभी लोग एकत्र हो गये थे. पेंच टाइगर रिजर्व को प्रबंधन के हिसाब से दो भागों में विभाजित किया गया है कोर जोन (411 वर्ग किमी) और बफर जोन (768 वर्ग किमी)। तुरिया खवासा बफर रेंज में स्थित है. बैचमेट्स के परिवारों को शाम 7.30 बजे से कॉन्फ्रेंस हॉल में मिलना था। पुनर्मिलन सह परिचय कार्यक्रम में कुल सत्रह साथी पत्नी के साथ तो कुछ बेटे, बहू और बेटी के साथ भाग लिए. पेंच टाइगर रिजर्व के पूर्व संयुक्त निदेशक किशोर कुमार गुरवानी, मध्य प्रदेश के दो अन्य बैचमेट वाहने जी और वास्कले जी के साथ बैचमेट्स मीट के मुख्य आयोजक थे. परिचयात्मक सत्र में सभी बैचमेट्स का स्वागत गेरुआ उत्तरीय एवं तुलसी माला से किया गया। ऐसा जाहिर तौर पर उम्र के अगले पड़ाव को देखते हुए किया गया था. उसी दिन विदाई के समय का सभी को विभिन्न वस्तुओं से भरे उपहार बैग दिए गए. यह थोड़ा अजीब लगा लेकिन गुरवानी ने बताया कि ऐसा इसलिए किया गया क्योंकि यदि किसी उपहार का साइज या रंग आपको पसंद नहीं हों तो आप तुरिया गेट पर उपहार की दुकान से अपनी पसंद का आकार और रंग बदल सकते हैं, जहां से सामान खरीदा गया था. एक दूसरे का स्वागत एवं उपहार प्रदान आपस में ही आयोजक द्वारा कराया गया. कार्यक्रम के अंत में न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, नई दिल्ली द्वारा हाल ही में प्रकाशित मेरी हिंदी काव्य संग्रह 'भाप बन उठती जिंदगी की गंध' का लोकार्पण भारतीय वन सेवा के अधिकारियों द्वारा किया गया. एक मधुर और यादगार इस आयोजन के बाद हम मित्रों ने एक साथ भोजन करके अपने काॅटेज में रात्रि विश्राम किया.

भारत में कुल पचपन बाघ आरक्ष्य हैं. टाइगर रिजर्व की स्थापना मुख्य रूप से बाघ संरक्षण और बाघों की संख्या बढ़ाने के उद्देश्य से की गई है. पेंच टाइगर रिजर्व में आखिरी बार बाघों की गणना वर्ष 2022 में की गई थी जिसमें कुल बाघों की संख्या 77 पाए गए थे. बाघों को अपने आवास के लिए विशेष वनों की आवश्यकता होती है.

पेंच टाइगर रिजर्व का जंगल बाघों के आवास के लिए एक बेहतरीन और उपयुक्त जगह है.

आज के पेंच टाइगर रिजर्व का क्षेत्र अपना गौरवशाली इतिहास रखता है. इसकी प्राकृतिक संपदा और समृद्धि का वर्णन आईने-अकबरी में किया गया है. आरए स्ट्रैंडेल की 'कैंप लाइफ एट सिवनी-सतपुड़ा', फोर्सिथ की 'हाईलैंड्स ऑफ सेंट्रल इंडिया' और डनबर ब्रैंडर की 'वाइल्ड एनिमल्स ऑफ सेंट्रल इंडिया' जैसी कई प्राकृतिक इतिहास की किताबों में इस क्षेत्र में प्रकृति की प्रचुरता का विस्तृत चित्रण देखने को मिलता है. स्ट्रैंडेल की अर्ध-आत्मकथात्मक 'सिवनी' रुडयार्ड किपलिंग की 'जंगल बुक' के पीछे प्रेरणा रही है. पेंच टाइगर रिजर्व और इसके आसपास का क्षेत्र रुडयार्ड किपलिंग की सबसे प्रसिद्ध कृति 'द जंगल बुक' का आधार है. 'द जंगल बुक' सिवनी के जंगल पर आधारित है, जिसे अब 'पेंच टाइगर रिजर्व' कहा जाता है. इसे 'मोगली लैंड' और 'गेटवे ऑफ़ टाइगर लैंड' के नाम से भी जाना जाता है. सर रुडयार्ड किपलिंग ने पुराने मध्य प्रदेश की देवास रियासत में सेवा की थी. उन्होंने सिवनी के जंगलों का दौरा किया था और क्षेत्र के जंगलों और वन्य जीवन के बारे में जाना था. जिस रिसॉर्ट में हम रुके थे उसका नाम सर रुडयार्ड किपलिंग के नाम पर ही रखा गया है.24.10.2024 की सुबह सभी लोग किपलिंग कोर्ट के प्रांगण में छः बजे सुबह एकत्र हुए जहां नौ खुली जिप्सियां हमें सफारी टूर और बाघ दिखाने के लिए खड़ी थीं. प्रत्येक जिप्सी पर पांच-पांच लोग सवार थे, एक गाइड और ड्राइवर साथ था. सभी लोग एक साथ तुरिया गेट पहुंचे जहां पेंच टाइगर रिजर्व प्रबंधन के कर्मी हम सभी को एक बाघ परियोजना की टोपी पहनाते हुए कलाई पर बाघ संरक्षण का एक रक्षाबंधन बांधा. तुरिया गेट के भीतर का जंगल कर्माझिरी कोर रेंज में स्थित है. तुरिया गेट से थोड़ी देर साथ चलने के बाद जिप्सियां अलग -अलग दिशाओं में निकल गईं. छः बजे से ग्यारह बजे तक जंगल भ्रमण और जंगल में मंगल किया गया. जंगल की खूबसूरती को शब्दों में बयां करना मुश्किल है. शुष्क पर्णपाती सागौन वन और शुष्क पर्णपाती मिश्रित वन इस परिप्रेक्ष्य के मुख्य वन के रूप में पाए जाते हैं जिनमें सागौन, आसन, केंद, धौरा, सलाई, महोगनी, जामुन आदि पेड़ और बांस प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं. सागौन वनों के बीच अच्छी घास भूमि उपलब्ध थी. ऐसे वन शाकाहारी और मांसाहारी दोनों प्रकार के जंगल के जानवर के लिए उपयुक्त होते हैं। यह जंगल मुख्य रूप से बाघ, तेंदुआ, जंगली भैंस, सांभर, चीतल, लंगूर आदि का घर है. पेंच

बाघ अभयारण्य अपने कई दुर्लभ जीवों और सुविधाओं के साथ पर्यटकों को तेजी से आकर्षित कर रहा है. खूबसूरत झीलें, नदियाँ, ऊँचे-ऊँचे पेड़ों के घने झुरमुट, रंग-बिरंगे पक्षियों की चहचहाहट, ठंडी हवाएँ, सौंधी मिट्टी गंध, वन्य जीवों का अनोखा संसार, सचमुच प्रकृति के पूरे शरीर पर हरियाली का ऐसा अथाह सागर रोम-रोम में सिहरन भर रहा था. यह पेंच का जंगल कलरव करने वाले पक्षियों की 200 से अधिक प्रजातियां, तेंदुआ , सांभर के पलक झपकते ही दिखने और गायब होने वाले वन्य जीवों , भौंहें फैलाए खड़े जंगली भैंसों और लगभग 80 बाघों से भरा हुआ है।

अल्पाहार जंगल के एक निरीक्षण भवन में आयोजित किया गया था. यहीं पर समूह फोटोग्राफी की गई . नाश्ता करने के बाद हम लोग जंगल भ्रमण करते हुए रिसोर्ट लौट आये. नहा-धोकर हमलोग थोड़ा आराम किए और फिर तीन बजे जंगल भ्रमण के लिए निकल गए तो शाम सात बजे लौटे. जंगली भैंसे, चीता, सांभर, लंगूर तो खूब देखने को मिले लेकिन कोई बाघ मामा नहीं मिला जिसके लिए पूरे दिन जंगल की खाक हमलोगों ने छानी. हाँ, हमलोगों ने हिरणों और लंगूरों की आवाज़(कालिंग)सुनी, बाघों के पग चिह्नों को देखा जो अगले - बगल में बाघों की उपस्थिति को दर्शाता है.

शाम को हमारे लिए किपलिंग रिसोर्ट के खुले प्रांगण में एक संगीतमय शाम का आयोजन किया गया था. कार्यक्रम का मुख्य आकर्षण बांसुरी वादन था. बीच-बीच में विभिन्न राज्यों से आये साथियों ने प्रस्तुति दी. इसी क्रम में मैंने भी अपनी दो भोजपुरी कविताएँ सुनाई. संगीत के साथ ग्रुप नृत्य का आनंद लिया गया. सुरुचिपूर्ण भोजन और पेय की व्यवस्था थी. कार्यक्रम आधी रात तक चला.अगले दिन 25.10.2024 को दोपहर के भोजन के बाद हम दो बजे जंगल सफारी के लिए खुली जिप्सी पर एक साथ निकले. आज हमारा रुखड़ कोर और अरी बफर रेंज की परिक्रमा करने का कार्यक्रम था. रूखड़ और अरी के जंगलों में अनेकों वन जीव देखने को मिले. जंगल के बीच में 1920 में बने रुखड़ वन विश्राम गृह में कुछ देर आराम करने के बाद नेल्योर नेचर कैंप में चाय और पकौड़ी का आनंद लिया गया. वहां जंगल के बीच में ग्राम इको विकास समिति ने एक आरामदायक टेंट हाउस की व्यवस्था की है जिसका प्रतिदिन का किराया 4600/ रुपया है. रात्रिभोज का आयोजन अरी रेंज में 1903 में निर्मित साकाटा रेस्टहाउस में किया गया था. जब हम सभी शाम के समय वहां के लिए निकले तोजंगल का रास्ता पार करते बाघ मामा को बहुत करीब से देखा. बाघ सड़क पार कर सड़क के किनारे बांस के जंगल में फैल कर आराम करने लगा. बहुत निकट से सभी ने बाघ देखा और पेंच आने का उद्देश्य पूरा हो गया. साकाटा रेस्टहाउस में डिनर के बाद रात नौ बजे सभी लोग रिसॉर्ट की ओर चल दिए. दिनांक 26.10.2024 को प्रातः 5 बजे मैं अपनी पत्नी के साथ राँची के लिये प्रस्थान किया.

पेंच टाइगर रिज़र्व प्रबंधन को देखकर मुझे वन्यजीव प्रबंधन के अनुकरणीय सबक सीखने को मिला जो मैंने चालीस वर्षों की वन सेवा में नहीं सीख पाया था. यह कहना गलत नहीं होगा कि पेंच देश के सर्वश्रेष्ठ बाघ आरक्ष्यों में से एक है. दो दिवसीय वन भ्रमण में एक भी पेड़ की अवैध कटाई नहीं देखने को मिली।जल स्रोतों की प्रचुरता और घास के मैदानों से सजे सघन वन बताते हैं कि हम वन्यजीवों के लिए अपना घर हैं और परिणामस्वरूप रिजर्व में बाघों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ रही है। वन कर्मियों के अतिरिक्त चालक, मार्गदर्शक और पशु ट्रैकर के रूप में हजारों स्थानीय निवासियों को व्याघ्र आरक्ष्य प्रबंधन न केवल रोजगार उपलब्ध करा रहा है बल्कि इको विकास समिति के माध्यम से रोजगार सृजन कर ग्रामीणों की मदद भी कर रहा है. उपहार सामग्री के निर्माण से कई लोगों को रोजगार मिल रहा है. देश के अन्य बाघ आरक्ष्यों को इससे सीख लेनी चाहिए. अंत में, किपलिंग कोर्ट रिसोर्ट के आतिथ्य के बारे में कुछ भी कहा जाए वह कम ही होगा. जंगल के बीच में प्रदान किया जाने वाला पांच सितारा आवासीय और भोजन प्रबंधन के साथ अथिति देवो भव का अनुभव सचमुच अविस्मरणीय है. पेंच टाइगर रिजर्व के वरिष्ठ अधिकारियों से लेकर कनिष्ठ वन कर्मियों तक की सेवा और समर्पण को धन्यवाद देना और सराहना करना, आभार व्यक्त करना उनके लिए एक छोटा शब्द होगा.उनकी सेवाभाव को पूजा की संज्ञा देना उचित होगा. अपने बैचमेट किशोर कुमार गुरवानी को इस बैचमेट्स मीट को अविस्मरणीय बनाने के लिए ग्रांड सैल्यूट. यही पर अपने संस्मरणों को विराम दे रहा हूँ और अगले बैचमेट्स मीट में मिलने की आशा के साथ मैं आराम करने जाऊं उसके पहले कहना चाहता हूँ कि -

फिर मिलेंगे मित्र, वर्ष दो हजार पच्चीस - छब्बीस में मेरे दिल में खुशी है,मुझे इंतजार है,उस दिन के लिये.

संस्मरण

डॉ. सतीश "बब्बा"
चित्रकूट, उत्तर - प्रदेश,

महाकुंभ की यादगार यात्रा

मैं अपने डभौरा वाले घर में था, सुबह के तीन बजे से ही जाग गया था। मोबाइल पर देखा तो डॉ. अम्बेडकर नगर एक्सप्रेस प्रयागराज जाने वाली पौने पांच बजे थी। तब कुहरा नहीं था।

मैं साढ़े चार बजे सुबह प्रयागराज जंक्शन के लिए टिकट लेकर प्लेटफार्म नंबर दो पर पहुंच गया था। तभी उद्घोषणा हुई कि, "गाड़ी नंबर ०१८०४ वीरांगना लक्ष्मीबाई झांसी से से चलकर प्रयागराज जंक्शन को जानेवाली कुंभ मेला स्पेशल गाड़ी शीघ्र ही प्लेटफार्म नंबर दो पर आएगी!"

अब कुहरा छाने लगा था, मैं कुंभ मेला स्पेशल गाड़ी से जाने के लिए फैसला किया। गाड़ी कुंभ मेला स्पेशल आई मैं उसी में चढ़ गया था। जगह थी एक सीट पर मैं बैठ गया था।

मेरे पीछे एक पुरुष दो महिलाओं, तीन नौजवान लड़कियों के साथ चढ़ा; वह एक एक करके अलग - अलग सीटों में बैठे जिसमें एक लड़की जो गोल चश्मा पहन रखा था, आकर मेरे बगल में बैठ गई थी। वह बिटिया बहुत खूबसूरत थी उसके बिखरे मुलायम बाल उसकी पीठ पर सजे हुए थे। मुझे वह मेरी अपनी बेटी जैसी लगी थी। वह संकुचित सी मेरी ओर पीठ करके बैठी थी। मैंने उससे कहा, "ठीक से बैठ जाओ न, तुम मेरी बिटिया रानी जैसी ही हो!"

उस लड़की ने मरी ओर देखा, अब वह अच्छी तरह से मेरी बगल में बैठ गई थी।

साथ में आया पुरुष खड़ा था। सामने की सीट पर एक आदमी सोया था तीन बैठे थे। उस बिटिया ने उनसे कहा, "सभी लोग बैठ जाइए, यहां एक आदमी को बैठा लीजिए!"

वह शुद्ध बुंदेलखंडी में कहने लगे कि, "चार जने की सीट है, हम और क्यूं बैठा लें!"

अब मैंने कहा, "देखो इतै सोने की सीट न है, सुकर मनाओ स्पेशल गाड़ी सरकार ने चला दी है वरना खड़े होने के लिए जगह नहीं मिलती; ऐसा करो इज्जत के साथ सभी बैठ जाओ!"

वह भद्र पुरुष आकर मेरे सामने ही, सामने वाली सीट पर बैठ गया। अब मैंने उस पुरुष से पूछा, "आप कहां रहते हैं?"

उसने बताया, "मेरा गांव पास में ही है, फिलहाल अब मैं छमुहा रोड डभौरा में निजी घर बनाकर रहता हूं!"

मैंने पूछा, "आप क्या काम करते हैं, मेरा मतलब है नौकरी या कोई धंधा?"

उस भद्र पुरुष ने बड़ी शालीनता से बताया कि, "मैं शिक्षक हूं, सरकारी प्राथमिक विद्यालय में पढ़ाता हूं!"

उसने मुझसे मेरा परिचय पूछा, मैंने भी बताया। हम धीरे-धीरे घुल-मिल गए थे।

सुबह साढ़े सात बजे हम प्रयागराज जंक्शन पर उतरे, वहां से हमने सिबिल लाइन की ओर नहीं जाकर, शहर की तरफ से जाने का फैसला लिया था; फैसला हम दोनों पुरुष सहयात्रियों का था।

दोनों महिलाओं में से एक तो उन शिक्षक महोदय राजनरायन मिश्र की पत्नी थी, एक औरत का परिचय मैंने नहीं लिया था। वह दोनों महिलाएं हमारे साथ ही थीं।

एक तो बालिका, दूसरी वजह चंचलता से भरपूर जवानी! वह तीनों बालिकाएं स्टेशन के बाहर प्रदर्शित बंदे भारत गाड़ी के पुतले आदि का कोई फोटो लेने लगीं थीं, कोई वीडियो बनाने लगी थी।

मैंने उनसे कहा, "अभी कुहरा है, साफ छवि नहीं आएगी, बिट्टू हम लौटकर वीडियो बनाएंगे!"

वह सभी मेरी बातों से खुश हो गईं, हमारे साथ पीछे पीछे चल पड़ीं थीं। हम सब थोड़ी देर में एक आटो में बैठकर दारागंज आ गए थे।

महाकुंभ का प्रचार प्रसार जिस तरह से हुआ था, उसी तरह से व्यवस्था थी। जितनी जनता उतनी पुलिस भी नजर आ रही थी। चप्पे-चप्पे पर तैनात पुलिसकर्मियों को अपने कर्तव्य का पालन करते हुए देखा मैंने, उत्तराखंड पुलिस, उत्तर प्रदेश पुलिस तो स्वाभाविक थी। विभिन्न जनपदों से आए थे उत्तर प्रदेश पुलिसकर्मी!

खास चौराहों पर सीमा सुरक्षा बल के जवान सतर्कता से अपना कर्तव्य निभा रहे थे।

हम लोग तेरह नंबर के पुल से उस पार मेला क्षेत्र में गए थे। फिर गंगा तट पर साफ - सुथरे बनाए गए नहाने वाले घाट पर हम नहाने के लिए गए थे। जहां स्त्रियों के लिए कपड़े बदलने के लिए सुरक्षित ठिकानों को बनाया गया था। व्यवस्था अच्छी थी।

मैंने राजनरायन मिश्र से अपने मन की बात कही, "मिश्र जी, आप हैं तो मैं भी शुकून से नहा लूंगा वरना चोर - उचक्कों के डर से ठीक से नहीं नहा पाता!"

मैंने देखा, वह सतर्क थे, होना भी चाहिए! मैं खाली हाथ अकेले, पहली मुलाकात थी, मेरा भी विस्वास वह कैसे करते!

मैंने उनपर पूरा भरोसा किया था। मैंने सभी कपड़े उतार दिए थे, उनके सामने गंगाजल भरने के लिए डब्बा लेने के लिए पैसे निकाले थे; उनके पास सबकुछ छोड़कर बिंदास स्नान किया था।

उन मिश्र दंपति ने तब तक सामान नहीं छोड़ा था, जब तक उनके साथ की लड़कियां, साथ की महिला लौटकर नहीं आईं! मैंने कहा भी था कि, "आप दोनों भी स्नान कर आइए!"

उन दोनों ने अनसुना कर दिया था। मैं समझ गया था, होना भी चाहिए क्यों करें विस्वास? आजकल तो विस्वास में ही लोग लूट लिए जाते हैं। राजनरायन मिश्र अपनी पत्नी के साथ नहाने चले गए थे; साथ में आई एक और महिला का मेरा परिचय हुआ, मेरा पारिवारिक परिचय उसने लिया था।

वह महिला मेरी दूर की रिश्तेदार निकली थी। मेरी पत्नी की मौत सुनकर दुखी हुई थी। वह भी एक सभ्य महिला थी। साथ में आईं सुंदर बालिकाओं में एक उसकी बालिका थी, एक पड़ोसी की बालिका थी जो उन पर यकीन करके पिता ने भेजा था। फोन पर उसके पिता ने कहा था कि, 'मेरी बिटिया को झूला भी झुला दीजियेगा!'

मैंने डॉ. भगवान प्रसाद उपाध्याय को मैसेज किया था कि, 'मैं नहा चुका हूं, आ रहा हूं!'

उन्होंने मैसेज में ही कहा था कि, 'हां, आइए, पधारिए!'

मुझे पुल नंबर सोलह से तुलसी, भारद्वाज मार्ग चौराहे पर जाना था। जो पता डॉ. उपाध्याय जी ने पहले से ही दे रखा था।

मैंने शिक्षक राजनरायन मिश्र से कहा, "मुझे एक आदमी से मिलने जाना है, मोबाइल फोन से संपर्क बना रहेगा, मैं उनसे मिलकर आपको मिल लूंगा; यहां से स्टेशन तक में जरूर मिलेंगे!"

मैं चप्पे-चप्पे में तैनात पुलिसकर्मियों से पूछते हुए देवरहा बाबा सेवाश्रम पहुंच गया था। जहां डाक्टर उपाध्याय कल्पवास कर रहे थे।

अंदर शिविर में गया कि, सामने ही सौम्यता, सादगी के प्रतिमूर्ति अपनी सफेद, कुछ यदा-कदा काली ऐसी जैसी खिचड़ी में चावल ज्यादा, मूंग की दाल कम हो ऐसी दाढ़ी के साथ घूम रहे थे।

भला बताओ मैं उनको कैसे न पहचानता वही तो मेरे साहित्यिक गुरु जो थे। पास जाकर मिलन प्रणाम आदि औपचारिकताएं पूरी की गईं थीं। फिर कुर्सी पर बैठ गए थे। इसके बाद डॉ. भगवान प्रसाद उपाध्याय जी ने बढ़िया चटाई बिछा दिया था; जिसमें हम दोनों सुखासन आसीन हुए थे ऐसे, जैसे भारद्वाज आश्रम में जागबलिक आसीन हुए थे।

पानी पीने के लिए पेड़ा - बर्फी खाकर पानी पिया। वहां किसी ने कोई आयोजन की तैयारी भी कर रखी थी।

कुछ देर तक उनसे सुखद बातें करने के बाद मैंने बिदा मांगी थी, डॉ. भगवान ने खाना खाने के लिए कहा था, मैंने मना कर दिया था। अब मैं उनके पास से चल पड़ा था, वह कुछ दूर तक मेरे साथ भी आए थे।

जगह जगह चौराहे बनाए गए थे, चौराहों पर दुकानें सजी हुई थीं। सज - धज कर जुलूस निकल रहे थे। सभी एक तरफ से पांडाल सजाए गए थे।

एक पांडाल के सामने हरमोनियम आदि वाद्य यंत्रों से विदेशी एवं भारतीय स्त्री - पुरुष हरे रामा, हरे कृष्णा, कृष्णा - कृष्णा हरे हरे का कीर्तन खड़े - खड़े कर रहे थे, हरमोनियम एक अंग्रेज खड़े - खड़े ही बजाते हुए यही हरे रामा, हरे कृष्णा, कृष्णा कृष्णा हरे हरे का उच्चारण कर रहा था शायद, वह और हिंदी में उच्चारण नहीं कर सकता था। लम्बी लाइन लगी थी, खाना बंट रहा था। मैंने वहां खड़े एक चौकीदार से पूछा, "यह लोग कहां से हैं?"

उस चौकीदार ने बताया कि, "यह अडाड़ी के मंदिर से जुड़े भारत के विभिन्न प्रांतों से हैं, बिदेसी भी हैं, इंग्लैंड, सिंगापुर आदि जगहों से!" उसने मंदिर का नाम बताया था जो मुझे भूल गया है।

मैं अगर लाइन में लगता तो दो बज ही जाते इसलिए सिर्फ यह देखकर कि, क्या क्या है? अपनी कलम की भूख मिटाने की कोशिश किया था। राजमा चावल, सब्जी भी थी, स्वाद पूछने पर लोगों ने बताया था कि, 'बहुत बढ़िया है!'

एस जगह चावल सब्जी प्रसाद के रूप में कागज के दोने में मैंने भी लिया था। वैसे देवरहा बाबा सेवाश्रम के प्रवेशद्वार पर ही बढ़िया चना मसालेदार मिल रहा था। भीड़ देखकर मैं सिर्फ ललचाकर निकल लिया था।

एक पांडाल के सामने दाल-रोटी, सब्जी चावल बढ़िया भरपेट भोजन बंट रहा था, लोग खा रहे थे। खाना लेने के लिए लम्बी लाइन लगी हुई थी। ऐसा लगता था जैसे, सारे भुखमंगे यहीं महाकुंभ मेला में भागीदारी करने आ गए हैं।

कुछ सज्जन बिल्कुल नहीं ले रहे थे। मैंने उनसे पूछा कि, "आप लोग क्यों नहीं ले रहे हैं, भीड़ को डर रहे हैं क्या?"

उसमें से एक अधेड़ ने कहा था कि, "यह धर्म क्षेत्र है, सैकड़ों सालों में यह पर्व आया है। यहां दान करना चाहिए! गरीब, निरीह, बेघर वालों को खिलाना चाहिए, बेसहारा को सहारा देना चाहिए, हम दान कर नहीं सकते, किसी को खिला नहीं सकते हैं तो, हमें दान लेने, खाने का अधिकार नहीं है!"

मैंने कहा, "प्रसाद नहीं लेना भी तो पाप होता है, देखिए न कितने लोग लाइन में खड़े हैं, कितने खा रहे हैं!"

उस आदमी ने कहा, "प्रसाद जो भगवान के भोग से, कथा के अंत में मिले जो मुंह में डालो सिर्फ गले तक जाकर चुक जाए वह प्रसाद, उतना थोड़ा सा प्रसाद लेना चाहिए! यहां तो बहुत से लोग पैसा कमाने आते हैं, चार - चार जगह खाते हैं, दक्षिणा लेते हैं! दाढ़ी बढ़ा लेते हैं; मेला समाप्त होने पर घर जाकर फिर दाढ़ी बनाने लगते हैं!"

कल्पवासी नहाकर दान करते हैं, कोई भोजन करा रहे हैं, कोई सेज दान कर रहे हैं। कल्पवासियों के रिश्तेदार आते जाते हैं, पहचान के मित्र भी आते जाते रहते हैं। दो दो, चार - चार दिन लोग रुककर घूम - घूमकर मेला में कहीं रासलीला, राम-लीला, कहीं भागवत, कहीं पर कोई पुराण सुनते, देखते हैं।

साधु-संत प्रवचन करते हैं, लोग ध्यान से सुनते हैं। सभी धर्ममय नजर आते हैं। आस्था के इस महाकुंभ के पावन पर्व में अनेक देवी - देवताओं की झांकियां सजाई गई हैं।

नागा साधु, किन्नर साधु, देशी साधु एवं विदेशी साधुओं के दर्शन मिलते हैं; ऐसा लगता है यहीं रुक जाएं घर नहीं जाएं! काश, ऐसा संभव होता!

तीन - चार घंटे घूमने के बावजूद न मैं थका न मन थका फिर भी कई किलोमीटर दूर पैदल चलकर वाहन, आटो सेवा मिली थी। जहां अच्छे-बुरे सभी तरह के पुलिसकर्मी भी थे; एक पुलिस वाले ने डंडे से आटो में प्रहार करके कहा, "ज्यादा पैसा ले रहा है!"

उसने कहा, "नहीं सर, इन लोगों से पूछ लीजिए!" सभी सवारी आटो वाले के साथ थी, चिल्ला रही थी फिर भी उसने नहीं माना! आखिर आटो चालक उतरकर एक तरफ गया फिर सही किराया करके आया तब कहीं चला!

मैंने कहा, "यार तुम लोग इतना जुर्म सहते क्यों हो? ऊपर के अधिकारी घूम रहे हैं कहो न उनसे!"

वह शुद्ध बघेली में कहा, "हम पैसा कमाने आए हैं, रोज चलना है, मेला तक रहेंगे, काहे इनसे पंगा लेई!"

पहले तीस - तीस किराया कहा था, "अब पचास रुपए में चलूंगा चलना है तो ठीक वरना, उतर सकते हैं!"

उसने पचास कहा था, सौ भी कहता तो लोग उसे देते बाहरी थे, रास्ता भी पता नहीं था, भीड़ भी जमकर थी। मेला क्षेत्र में थकी नहीं लगती है, शहर में थकी भी बहुत लगती है; ऊपर से गाड़ी छूट गई तो फिर दुगुना खर्च, परेशानी ऊपर से!

वह दो सौ दिया था, यात्रियों से दुगुना वसूल लिया था।

कुल मिलाकर प्रशासन की व्यवस्था बहुत अच्छी थी। बहुत ही अच्छा लगता था। बार - बार मन करता है गंगा, यमुना, अदृश्य सरस्वती संगम में डुबकी लगाने को, उस मेला क्षेत्र में रहने को!

मौका मिला तो एक बार फिर आऊंगा तीर्थराज प्रयाग में इसी महाकुंभ मेला में, यही सोच रहा था कि, राजनरायन मिश्र का फोन आ गया था। राजनरायन मिश्र ने कहा था कि, "हम चुनगी आकर आटो के इंतजार में हैं!"

मैंने उनसे कहा, "एक गाड़ी जाने वाली है जगह भी मिली है, आप कहें तो मैं चलूं, आप कहें तो मैं रुक जाता हूं!"

उधर से आवाज आई, "अपना चले जाई, हम आ जाब, अपना चले जाई!"

मैं घर आकर लिख रहा हूं, रात काफी हो गई है। राजनरायन मिश्र ने फोन किया है, कह रहे थे, "एक दिन आकर चाय हमारे यहां जरूर पीना है आपना का!"

मैंने इस महाकुंभ मेला की यात्रा को यादगार बनाने के लिए, यह दोस्ती का रिश्ता बरकरार रखने के लिए उनके आग्रह को स्वीकार किया है, इसे मजबूत करने का दृढ़ निश्चय किया है।

अब शायद ही ऐसा महाकुंभ मेला मेरे जीवन में आएगा, इसीलिए इसे मैंने सदा के लिए सहेज लिया है।

दोहा

डॉ. अखिलेश शर्मा
इन्दौर

फाल्गुन

इस फागुन चौपाल से, निकली ऐसी धार।
देह मेरी चंदन हुई ,अधर हुए कचनार ।।

चूड़ी, पायल से निकली, एक ऐसी झंकार ।
इस फागुन में फूट पड़ा, बीस बरस का प्यार।।

पिचकारी की धार- सी, अंखियां करती वार ।
प्रीत - राग के सामने , सारी धुन बेकार।।

जिन अधरों ने लिख दी थी, बीते बरस तकदीर।
इस होली में चल रहे , उन अधरों के तीर।।

घर, देहरी भी लांघ गया, यह फागुन त्यौहार ।
फिर भी गोरी हंस रही, तन को मन को हार ।।

रंग गुलाबी लगा गया ,कोई बहाना लेय।
मन सतरंगी कर गया , प्रीति की पाती देय।।

होली मे सब जायज है, प्यार, वार, तकरार ।
फिर साजन ने कर दिया, रंगों से श्रृंगार ।।

असफल होती प्रेम कथा

अश्विनीकुमार दुबे

जन्म : 24 जुलाई, 1956 पन्ना (म0प्र0)
इंजीनियरिंग सेवा से सेवा निवृत्त ।
शिक्षा : इंजीनियरिंग में डिप्लोमा, हिन्दी में स्नातकोत्तर,1970 से विभिन्न पत्र- पत्रिकाओं में व्यंग्य, कहानियां, उपन्यास, निबंध, नाटक, पटकथा, रेडियो रूपक, डायरी, रिपोर्ताज, संस्मरण एवं संगीत विषयक रचनाएं प्रकाशित।
अब तक सोलह व्यंग्य संग्रह (चयनित मिलाकर),सात उपन्यास और तीन कहानी संकलन प्रकाशित।
शास्त्रीय संगीत पर एकाग्र : 'पंचामृत' नामक पुस्तक रज़ा फाउंडेशन द्वारा प्रकाशित।
वैचारिक निबंधः 'भारत- इतिहास,संस्कृति और धर्म' (मंजुल प्रकाशन के उपक्रम 'सर्वत्र' से प्रकाशित)
पुरस्कार : भारतेन्दु पुरस्कार, अंबिका प्रसाद दिव्य पुरस्कार, स्पेनि सम्मान,व्यंग्य लेखन में विशिष्ट योगदान के लिए उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का पंडित श्री नारायण चतुर्वेदी सम्मान,म.प्र साहित्य अकादमी का श्री वृंदावनलाल वर्मा पुरस्कार,म.प्र.संस्कृति विभाग द्वारा राज्य स्तरीय शिखर सम्मेन ।
संपर्क: 376 बी/आर, महालक्ष्मी नगर,
इंदौर- 452010 (म.प्र.)
मो. 9425167003
ईमेल : ashwinikudubey@gmail.com

मैं लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग में इंजीनियर था। तीन साल हुए सेवानिवृत्त हो गया परंतु मेरे विभाग ने मेरा पीछा नहीं छोड़ा। मेरे विभाग के बड़े अफसरों का कहना है कि अभी हमें आपकी जरूरत है। कई बड़े शहरों में इन दिनों स्मार्ट सिटी योजना प्रारंभ होने जा रही है, जिसमें हमें अनुभवी इंजीनियरों की जरूरत है। आप अपने ही शहर में रहते हुए हमारे लिए परामर्शदाता के रूप में काम करें। मैंने अपने प्रमुख अभियंता को कहा था – ''सर, मैंने अपनी नौकरी पूरी कर ली। अब आराम करना चाहता हूं। आप नए इंजीनियरों की भर्ती करिए। वे ज्यादा कुशल और ऊर्जावान हैं।''
उन्होंने हंस कर कहा था – ''सरकार की ओर से नई भर्तियां करने की अनुमति नहीं है। विभाग में इंजीनियरों के साथ ही लिपिक आदि के भी बहुत से पद रिक्त हैं परंतु सरकार नई भर्तियां नहीं कर रही है।''

– "सर, नये लोग कहां जाएंगे? विभाग का काम कैसे चलेगा?'' मैंने उनसे पूछा था।

– "सरकार की नीति है। हम लोग क्या कर सकते हैं? पहले साठ साल में कर्मचारी सेवानिवृत्त हो जाते थे। सरकार ने इस सीमा को बढ़ाकर बासठ साल कर दिया। कुछ विभागों में तो सेवानिवृत्ति की आयु सीमा पैंसठ साल है। ऊपर के पदों पर कई अफसर रिटायर्ड हो गए। उन्होंने एक्सटेंशन नहीं मांगा परंतु सरकार ने उन्हें दिया। पता नहीं क्यों सरकार नई भर्तियां करना ही नहीं चाहती। इस प्रकार हम लोगों को कम स्टाफ के साथ ज्यादा काम करना पड़ रहा है।'' मुख्य अभियंता ने कहा था।
चपरासी चाय के दो प्याले रख गया। चाय पीते हुए उन्होंने फिर मुझसे कहा – ''जब तक आपका मन लगे काम करिये। आपको एक सम्मानजनक मानदेय दिया जाएगा। जब हेड ऑफिस, यहां राजधानी आएंगे या अन्यत्र कहीं दौरे पर जायेंगे, तब यात्रा भत्ता अलग से प्रदान किया जायेगा। सरकार की नीतियां हम लोगों को समझ में नहीं आतीं। प्रशासन में एक नया अविष्कार हुआ है – संविदा नियुक्ति। बहुत कम मानदेय पर ला. गों की भर्तियां की जा रही हैं। ना इंक्रीमेंट, ना यात्रा भत्ता। बस, एक मुष्त मामूली–सी रकम देकर कुछ भर्तियां कर ली जातीं हैं। उससे भला कैसे काम चलेगा?''

मुख्य अभियंता की बातें सुनकर उस दिन मुझे भी लगा था, सरकार नई भर्तियां क्यों नहीं कर रही? जबकि हर विभाग में कई तरह के पद खाली हैं। अपने ही विभाग में सेवानिवृत्ति के पश्चात परामर्शदाता के रूप में काम करते हुए मुझे पूरे तीन साल हो गये। अभी दो सप्ताह पूर्व हमारे विभाग ने संविदा नियुक्ति के लिए 35 सहायक इंजीनियरों के पद विज्ञापित किए। अब तक दो हजार आवेदन आ चुके हैं। आज राजधानी में लिखित परीक्षा आयोजित है। तत्पश्चात उसमें चुने गए उम्मीदवारों को सा क्षात्कार के लिए बुलाया जायेगा। मुझे एक बजे तक राजधानी पहुंचना है। मुख्य अभियंता का फोन आया था कि सहायक इंजीनियरों की भर्ती परीक्षा में यहां आकर कुछ मदद करें। अनूप नगर, जहां मैं रहता हूं। यहां से राजधानी टैक्सी द्वारा दो घंटे में पहुंचा जा सकता है। मैं सुबह के दस बजे तक पूरी तरह तैयार हो गया। घर के सामने जो चौक है, वहां से टैक्सियां मिल जाती हैं। मैं तैयार होकर चौक पर पहुंच गया। वैसे तो टैक्सी में, जब चार यात्री हो जाएं, तब टैक्सी वाले ले जाते हैं। कभी–कभार तीन यात्री भी मिल जाएं तो टैक्सी वाले चल देते हैं। जबसे अनूप नगर से राजधानी के लिए चार्टड बसें चलने लगी हैं। टैक्सी वालों के ग्राहक कम हो गये हैं। फिर भी बहुत लोग अब भी टैक्सी से ही राजधानी जाते–आते हैं। मैं एक खाली टैक्सी में पीछे की सीट पर बैठ गया। ड्राइवर ने कहा – ''बस, दो सवारियां और आ जाएं फिर चलते हैं।'' दस मिनट के अंदर ही एक युवक और युवती टैक्सी के पास आए और जल्द राजधानी चलने के लिए कहने लगे। ड्राइवर चलने के लिए तैयार हो गया।

युवक ने मुझसे निवेदन किया – ''अंकल, आप आगे की सीट पर आ जाएं तो हम लोगों को सुविधा होगी।'' मैं ईयर फोन लगाकर अपने पसंद का म्यूजिक सुनने लगा था। मैंने ईयर फोन निकाला। युवक की बात समझी और आगे की सीट में आकर बैठ गया। वे युवक और युवती पीछे की सीट पर सुविधाजनक ढंग से बैठ गये। मैंने ड्राइवर से कहा – ''दो सवारियां आ गई हैं अब जल्दी चलो।'' वह चलने के लिए तैयार हो गया। मैं अपने कानों में ईयर फोन लगाकर फिर म्यूजिक सुनने लगा।

पीछे बैठे हुए युवक और युवती मेरी ओर से निश्चिंत थे। उन्हें लगा कि मैं उनकी ओर से बेखबर पूरी तरह म्यूजिक सुनने में मषगूल हूं। जबकि ईयर फोन लगाए रहने के बाद भी मैं उन दोनों की बातें भली–भांति सुन रहा था। मोबाइल पर साउंड को कम–ज्यादा करना तो मेरे ही हाथ में था। उनकी सामान्य बातचीत से मुझे पता लगा कि लड़की रतलाम की रहने वाली है और लड़का खरगोन का। लड़के ने इसी वर्ष इंजीनियरिंग में डिग्री कोर्स पूरा किया है और लड़की एम.बी.ए के अंतिम वर्ष में हैं। दोनों अनूप नगर में अपने–अपने हॉस्टल में रहकर पढ़ाई कर रहे हैं। लड़की जैन परिवार से है और लड़का अग्रवाल है। दोनों में प्रेम है और वे जल्द से जल्द विवाह करना चाहते हैं। दोनों ने अपने–अपने परिवारों में अपने प्रेम के विषय में बता दिया है। दोनों के परिवार वालों को कोई एतराज नहीं है। समस्या सिर्फ एक है, लड़के का फिलहाल बेरोजगार होना। लड़की के पिता का कहना है, जब तक लड़का नौकरी में नहीं आता, हम शादी नहीं कर सकते। लड़के के पिता भी इस बात से सहमत हैं। बात लड़के की नौकरी को लेकर अटकी हुई है। लड़के और लड़की का मानना है कि दोनों में से कोई एक भी सर्विस में आ जाए तो वे विवाह कर लेंगे।

लड़के ने बहुत विश्वास भरे स्वर में लड़की से कहा – ''लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग में बहुत दिनों बाद कुछ इंजीनियरों के पद निकले हैं। माना कि मेरे नंबर पैंसठ प्रतिषत हैं परंतु यहां लिखित परीक्षा द्वारा चयन होना है। बस इस परीक्षा में पास भर हो जाऊं। सूची में नाम आ जाए फिर इंटरव्यू के लिए ज्यादा चिंता की बात नहीं है। विधायक जी ने मुख्य अभियंता के नाम सिफारिषी चिट्ठी लिख दी है। मेरा सिलेक्शन अवश्य हो जायेगा।''

"आज की परीक्षा के लिए तुमने अच्छे से तैयारी की है न? स्मार्ट सिटी योजना के अंतर्गत भर्तियां होनी हैं। तुम्हारा विभाग नल–जल योजनाओं और शहरों से जल निकासी योजनाओं के लिए कार्य करता है, इससे संबंधित सवाल आज के पर्चे में पूछे जायेंगे। तुमने इन विषयों को अच्छी तरह देख लिया है न?... ... और इंटरव्यू में सिर्फ विधायक के सिफारिशी पत्र के भरोसे मत रहना। पूरी तैयारी करके जाना होगा।'' लड़की ने उसकी बात का जवाब दिया।

मैं समझ गया कि मेरे ही विभाग में संविदा पर सहायक इंजीनियरों की जो पोस्टें निकली हैं, उसकी लिखित परीक्षा में सम्मिलित होने के लिए यह युवक जा रहा है। उसकी हौसलाफजाई के लिए यह लड़की जो उसकी प्रेमिका है, साथ जा रही है। लड़के के डिग्री कोर्स में मात्र पैंसठ प्रतिषत मार्क्स हैं, अर्थात पढ़ाई में यह लड़का औसत है। आजकल तो अस्सी प्रतिषत से कम मार्क्स वालों को औसत माना जाता है। मुझे मालूम है कि पैंतीस पदों के लिए अब तक दो हजार आवेदन आ चुके हैं। आज

लिए अब तक दो हजार आवेदन आ चुके हैं। आज राजधानी के कुछ कॉलेजों में, जहां परीक्षा सेंटर बनाए गये हैं, वहां इन पदों के लिए लिखित परीक्षा आयेजित है। मेरा अनुमान है कि इस परीक्षा में उत्तीर्ण छात्रों में ऊपर से सौ लोगों की सूची बनाकर उन्हें साक्षात्कार के लिए बुलाया जायेगा, जिसमें से पैतींस प्रत्याशियों का चयन होना है।

लड़का फिर विष्वास पूर्वक लड़की से बोला –''मेरी तैयारी पूरी है। मैं इस लिखित परीक्षा में अवश्य निकल जाऊंगा। इंटरव्यू की मुझे चिंता नहीं है। विधायक जी की सिफारिश है न। लगभग छै महीने के भीतर मेरी पोस्टिंग हो जाएगी फिर हमें विवाह करने से कोई नहीं रोक सकेगा। मैंने तो तुम्हारे पापा से कहा था कि मेरा डिग्री कोर्स पूरा हो गया है। कहीं–न–कहीं मेरी नौकरी लग जायेगी, आप उसकी चिंता ना करें, विवाह के लिए हां कह दें। नौकरी तो लगनी ही है। परंतु वे मेरी बात माने नहीं। उनकी जिद है, पहले नौकरी बाद में शादी।''

"मेरे ख्याल में मेरे पापा का सोचना सही है। बिना आर्थिक आधार के वे अपनी बेटी का दांपत्य जीवन शुरू नहीं करना चाहते। मैं भी ऐसा ही सोचती हूं। क्या शादी के बाद भी हम लोग अपने माता–पिता पर आर्थिक रूप से निर्भर रहेंगे? यह ठीक नहीं होगा। मेरा एम.बी.ए का यह आखरी साल है। अच्छे छात्रों का हमारे कॉलेज में कैंपस सिलेक्शन हो जाता है। कई कंपनियों के प्रतिनिधी कॉलेज से अच्छे छात्रों का चुनाव कर उन्हें अपने यहां जॉब प्रदान कर देते हैं। तुम्हारी नौकरी कहीं नहीं लगती तो मेरी ही कहीं लग जाए परंतु हमारी जिंदगी का अपना कोई आर्थिक आधार होना चाहिए। यदि हमारे मां–बाप ऐसा सोचते हैं तो गलत नहीं सोचते।'' लड़की ने अपनी बात कही।

मुझे सरकारी नीतियों के प्रति क्षोभ हो रहा था। गली–गली में इंजीनियरिंग कॉलेज खोलने के लिए सरकार ने लाइसेंस दे दिए। अधिकांश इंजीनियरिंग कॉलेज तो नेताओं और सेठों के हैं। अब मोहल्ले के हर घर में एक बेरोजगार इंजीनियर है। किसी भी विभाग में नये पद नहीं निकल रहे हैं। सभी विभागों में बहुत काम है परंतु स्टाफ की कमी। संविदा नियुक्ति का नया फार्मूला सरकार ने निकाल लिया है। कम वेतन पर पूरा काम लो और जब चाहे तब कर्मचारियों को निकाल बाहर करो, इतनी बड़ी विसंगति पूरे देश में चल रही है। कहीं कोई विरोध नहीं। कोई आंदोलन नहीं। विपक्षी पार्टियां बेमतलब के मुद्दे उछालती रहतीं हैं। असल समस्या पर कोई बात ही नहीं करना चाहता। ऐसे न जाने कितने प्रेमी–प्रेमिका एक नौकरी के कारण अपने भविष्य का कोई निर्णय नहीं कर पा रहे।

कुछ निराश–से स्वर में लड़के ने कहा –''यदि मेरा इस नौकरी में सिलेक्शन ना हो पाया और तुम्हारा भी एम.बी.ए. करने के पश्चात केंपस सिलेक्शन ना हुआ तो?''

– "तब मजबूरन हमें अपने–अपने रास्ते अलग चलना होगा। कोई विकल्प नहीं। बिना किसी मजबूत आर्थिक आधार के मेरे पिता तुम्हारे साथ मेरे विवाह नहीं करेंगे। फिर सिर्फ प्यार के नाम पर मैं उनका विरोध नहीं कर पाऊंगी। लेकिन तुम ऐसा सोचते क्यों हो? तुम अवष्य इस परीक्षा में पास हो जाओगे और इंटरव्यू में भी तुम्हारा सिलेक्शन होगा।'' लड़की ने विश्वास पूर्वक कहा।

पेट्रोल पंप पर ड्राइवर ने पेट्रोल लेने के लिए गाड़ी रोकी। उसने मुझसे किराये के रुपए लेने के पश्चात पीछे मुड़कर देखा। लड़की ने झट अपने बैग में से रुपए निकाल कर दोनों का किराया ड्राइवर को दे दिया। पेट्रोल भराकर ड्राइवर ने टैक्सी आगे बढ़ाई। मुझे लगा, लड़का आर्थिक रूप से कमजोर है और उसमें आत्मविश्वास की भी कमी है। उसकी चिंता ये है कि किसी प्रकार उसकी शादी अपनी प्रेमिका के साथ हो जाए। नौकरी तो देर सबेर मिलती रहेगी। लड़की अपने प्रेमी की अपेक्षा ज्यादा व्यावहारिक है। उसे मालूम है कि जिंदगी में प्रेम की अहमियत है, परंतु जिंदगी सिर्फ प्रेम के भरोसे नहीं चल सकती। उसके लिए एक मजबूत आर्थिक आधार भी चाहिए। वह चाहती है कि उसका प्रेमी इस परीक्षा में पास हो जाए और किसी प्रकार उसे यह नौकरी मिल जाए तो वे प्रेम पूर्वक अपना दांपत्य जीवन शुरू कर सकते हैं। फिर कोई उसके निर्णय का विरोध नहीं करेगा। परंतु अभी, जबकी दोनों बेरोजगार हैं, तब वह विवाह के विषय में सोचना नहीं चाहती।

लड़का बार–बार अपनी बातचीत में इस बात पर जोर दे रहा था कि अब हमें शादी में विलंब नहीं करना चाहिए। नौकरी तो आज नहीं कल मिल ही जाएगी। सिर्फ नौकरी के नाम पर हमें अपना विवाह स्थागित नहीं करना चाहिए। लड़की उसके विचार से सहमत नहीं थी। उसका कहना था –''विवाह के पश्चात हम अपने मां–बाप से कोई आर्थिक सहायता नहीं लेंगे। हमें अपनी जिंदगी अपने संसाधनों से शुरू करनी चाहिए। मां–बाप ने हमें पाल पोस कर बड़ा किया। पढ़ाया–लिखाया। अब हमें अपनी जिंदगी की जिम्मेदारी स्वयं उठानी चाहिए। मां बाप तो हमारे अपने हैं। वे तो सदा हमारी सहायता के लिए तत्पर रहते हैं परंतु हमारी

भी अपनी जिंदगी के लिए कोई जिम्मेदारी है कि नहीं? इसप्रकार बिना किसी आर्थिक आधार के विवाह करना हमारे लिए ठीक नहीं होगा।''

लड़का अपनी प्रेमिका के विचार सुनते हुए उदास हो गया । वह नौकरी के लिए पूरा प्रयास कर रहा है। उसने मन लगाकर इंजीनियरिंग का डिग्री कोर्स किया। अब नहीं आए उसके नब्बे प्रतिषत मार्क्स तो वह क्या करे! फर्स्ट डिवीजन तो है उसके पास। अब तक वह कई प्राइवेट कंपनियों में एप्लाई कर चुका, कहीं सिलेक्शन नहीं हुआ। बड़ी कंपनियां आई.आई. टी में जाकर वहां कैंपस सिलेक्शन से अपने यहां नियुक्तियां कर लेतीं हैं। सामान्य छात्र आखिर कहां जाएं? उन्होंने भी तो इंजीनियरिंग में डिग्री कोर्स किया है।

बहुत देर तक दोनों के बीच मौन पसरा रहता है। लड़का उदास है। लड़की असमंजस में। एक ढाबे पर टैक्सी रुकती है। ड्राइवर हम लोगों से चाय आदि ले लेने का आग्रह करता है। हम लोग ढाबे के अंदर प्रवेश करते हैं। मैं एक कप कॉफी के लिए कूपन लेता हूं। यहां भी लड़की ने बैग खोलकर पैसे निकाले और चाय एवं सैंडविच के लिए कूपन लिया। थोड़ी देर बाद हम लोग फिर टैक्सी में थे।

लड़का बार–बार लड़की से जल्द–से–जल्द विवाह कर लेने का आग्रह कर रहा था और लड़की भी अपने मां–बाप द्वारा प्रस्तावित नौकरी की शर्त दोहरा रही थी। मुझे भी समझ में नहीं आ रहा था कि इस प्रेम कथा का अंत क्या होगा? जिस विभाग में लड़के ने एप्लाई किया है और आज विभाग द्वारा आयोजित लिखित परीक्षा के लिए राजधानी जा रहा है, मैं उसी विभाग मैं पैंतीस वर्ष नौकरी कर चुका हूं। अब सिर्फ पैंतीस पदों के लिए विज्ञापन निकला है और दो हजार विद्यार्थी आज लिखित परीक्षा में बैठेंगे। सौ लोगों की, नंबरों के अनुसार चयन सूची बनेगी, जिन्हें साक्षात्कार के लिए बुलाया जायेगा। उनमें से सिर्फ 35 लोगों का चयन होना है, संविदा आधार पर सहायक इंजीनियर के लिए। स्मार्ट सिटी योजना, अरबों रुपए की है, जिसमें विभिन्न विभाग मिलकर काम करेंगे। वाटर सप्लाई और ड्रेनेज सिस्टम का कार्य लोक स्वास्थ्य यांत्रिकी विभाग के जिम्मे रहेगा। कई विभागों में इंजीनियरों और अन्य कर्मचारियों की बहुत जरूरत है। पद खाली हैं, परंतु नियुक्तियों पर प्रतिबंध हैं। संविदा नियुक्ति के आधार पर थोड़े इंजीनियरों और कर्मचारियों की भर्ती करके काम चलाया जा रहा है। इंजीनियरों की तो आजकल बहुत दुर्दषा है। प्रदेश में सैकड़ों इंजीनियरिंग कॉलेज हैं और नौकरियां बहुत कम। कहां जाएं ये पढ़े–लिखे इंजीनियर? हमारी कॉलोनी में ही कई इंजीनियरों ने अपना–अपना व्यवसाय शुरू किया है। कोई डेयरीफॉर्म चला रहा है। कोई किराने की दुकान पर बैठता है। कोई सब्जी की दुकान चला रहा है। इस प्रकार इंजीनियरिंग के क्षेत्र में आजकल नौकरी मिलना बहुत कठिन है। मुझे यह लड़का बॉडी लैंगवेज से बहुत औसत लगता है। मुझे नहीं लगता कि यह लिखित परीक्षा में निकल पायेगा।

लड़का अब अपने प्रेम का वास्ता दे रहा है –''हमने साथ जीने का एक सपना देखा है! क्या एक नौकरी के कारण वह सपना टूट जायेगा? मुझे यदि नौकरी ना मिली तो तुम्हें तो मिल ही जायेगी। मैं कोई दूसरा काम कर लूंगा परंतु हम साथ–साथ रहेंगे। हमें विवाह कर लेना चाहिए। हमारे बीच जाति, धर्म और समाज की कोई बाधा नहीं है। हम दोनों के पेरेंट्स तैयार हैं। बाधा सिर्फ एक नौकरी की है, वह भी देर–सबेर दूर हो जायेगी, उसके नाम पर हमें अपने प्रेम की बलि नहीं चढ़ानी चाहिए।''

मैं तुम्हारी हर बात से सहमत हूं परंतु अपने पिता की षर्त को नकार नहीं सकती। हमारे–तुम्हारे पेरेंट्स मध्यम वर्गीय परिवार से हैं। किसी के पास कोई बड़ी पूंजी नहीं है, जिससे हम कोई दूसरा काम शुरू कर सकें। हमें बैंकों से लोन लेना होगा, जिसे पटाते–पटाते हम बूढ़े हो जायेंगे। फिर कोई जरूरी नहीं कि हमारा छोटा–मोटा व्यवसाय, जिसका हमें कोई अनुभव नहीं, वह अच्छा–खासा चल निकले। इस प्रकार अंधेरे में कदम रखना, मुझे मंजूर नहीं है। हम प्रयास करते हैं, पहले तुम्हारी नौकरी के लिए फिर मैं अपनी नौकरी के लिए। परंतु बिना किसी मजबूत आर्थिक आधार के हम शादी नहीं कर सकते।'' लड़की ने बहुत स्पष्ट शब्दों में अपनी बात लड़के को बताई।

लड़का चुप, मौन और गंभीर।

मुझे अपने जमाने की प्रेम कहानियां याद हो आईं। उस समय जातिगत बंधन बहुत कठिन थे। प्रेमियों को इन बंधनों को तोड़ना बहुत मुश्किल हुआ करता था। अलग–अलग धर्मों की भी प्रेम के बीच दीवारें हुआ करतीं थीं। समाज में प्रेमी–प्रेमिकाओं को खानदान का वास्ता दिया जाता था। प्रेमी जोड़े उन दिनों साथ जिएंगे, साथ मरेंगे कि कसमें खाया करते थे। जो ज़मी पर नहीं मिले, वे ज़न्नत में मिलेंगे, इस प्रकार की भावुक बातें हुआ करती थीं। जमाना जालिम है। दुनिया वाले हमें मिलने नहीं देते। हम ज़हर खाके ज़ान दे देंगे। इस प्रकार की

बातें उस जमाने में बहुत हुआ करती थीं। अब प्रेमी युगल अपने भविष्य के विषय में गंभीरता से सोचने लगे हैं।

हमारी टैक्सी राजधानी नाका पार कर चुकी है। अब जल्द ही हम लोग शहर में प्रवेश करने वाले हैं। मैं चाहकर भी इस प्रेमी युगल की कोई मदद नहीं कर सकता। मेरे अनुसार लड़के का इस परीक्षा में उत्तीर्ण होना बहुत मुश्किल है। यदि किसी प्रकार वह लिखित परीक्षा में सौ लोगों की सूची में आ भी गया तो साक्षात्कार में निकल पाना कठिन होगा। विधायक तो उन सबके लिए, जो उनके पास जाते हैं, सिफारिषी चिट्ठियां लिख दिया करते हैं। उन चिट्ठियों का ज्यादा महत्व नहीं होता, जब तक कि वे स्वयं ऑफिसरों से मिलकर व्यक्तिगत रुचि ना लें, यह बात भी कठिन होती है। इस प्रकार लड़के को यह नौकरी मिल जायेगी, इसकी संभावना मेरे अनुसार बहुत कम है। फिर भी मेरी शुभकामनाएं उसके साथ हैं।

लड़की यदि अच्छे नंबरों के साथ एम.बी.ए में पास होती है, तो कैंपस सिलेक्शन द्वारा किसी कंपनी में उसकी नौकरी लग सकती है, तब उसके पिता एक बेरोजगार इंजीनियर से उसकी शादी नहीं करेंगे। लड़की जब किसी बड़ी कंपनी में अच्छे जॉब में आ जायेगी, तब नौकरी करते हुए कई इंजीनियर स्वयं उसके यहां शादी का प्रस्ताव लेकर आयेंगे। तब तक इस प्रेम कथा के सफल होने में बहुत देर हो चुकी होगी।

टैक्सी बस स्टॉप पर पहुंच चुकी थी। ड्राइवर ने उतर कर दोनों तरफ के गेट खोले। हम लोग अपने–अपने बैग लेकर नीचे उतरे। लड़की ने एक ऑटो वाले को बुलाया और लड़के को उसमें बैठने के लिए कहने लगी। मैंने अपने कानों से ईयर फोन निकालकर लड़के का नाम पूछा। उसने बताया –''मुकेश अग्रवाल।'' मैंने उसे भावी परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाने की शुभकामनाएं दी। फिर हम लोग अलग–अलग अपनी मंजिल की ओर निकल पड़े।

लघुकथा

डॉ. चंद्रेश कुमार छतलानी

उदयपुर (राजस्थान)

प्रेम

"पता है आज होली खेली जा रही है." स्त्री स्वर
"हाँ...", उदासीन पुरुष स्वर.
"तो...!!"
"तो?"
"हम भी खेलें?"
"हाँ."
"लो अबीर का थाल."
"थाल?"
"पहले ये भी तुम्हें कम लगता था."
"तब बात कुछ और थी."
"अब क्या हो गया?"
"अब ये बच्चे खेलते हैं, उनके अपने तरीके से, हमारा क्या?"
"बच्चे या वंशज? अब हम पूर्वज हो गए हैं."
"हूँ... सालों गुज़र गए."
"ऊंहूँ, शताब्दियाँ."
"हूँ... होली तो पूरी बदल गई है."
"और तुम?"
"मैं... मैं, वही का वही, और तुम?" मुस्कराहट के साथ स्वर.
"वैसी की वैसी. फिर... हम तो खेलें... वही... वैसे ही". आग्रह करता स्वर.
"चलो राधा..." अगले ही क्षण उत्साहित स्वर.
"चलो कान्हा..." पुलकित स्वर.

कहानी

बबीता गुप्ता
बिलासपुर (छत्तीसगढ़)
guptagaurigun@gmail.com

मर्ज का इलाज

बसंतोत्सव मनाने फाल्गुन के रंग पैर पसारने लगते हैं। धानी-सी चूनर पर विविधवर्णीय फुलकारी की चूनर ओढ़े स्वागतातुर होली का आगमन साथ ही परीक्षा का मौसम भी दस्तक देता हैं। लेकिन इस बार तो बच्चों की परीक्षा होली के चार दिन पूर्व ही खत्म हो गई। फिर क्या धर्मपत्नी को मायके जाने का सुपर-डुपर बहाना मिल गया।मैंने रवानगी को ध्वस्त करने में टांग अड़ाना भी चाही तो पूर्वनियोजित परीक्षा समाप्ति की तिथि की घोषणा ने उठाकर एकतरफ पटक दिया।दाल-भात में मूसलचंद जैसी स्थिति भांप मैं अपने को सिकोड़कर बैठ गया।तय तिथि पर बच्चों से धर्मपत्नी से अलविदा कहते समय मुंह तो लटक गया पर दोस्तों के संग पार्टी-सार्टी करने के विचार से खुशी में मन ही मन लड्डू फूट रहे थे।

लेकिन चौबीस घंटे भी नहीं हुये थे कि खाली घर काटने को दौड़ रहा था।जैसे-तैसे कामकाज में दिन तो कट जाता पर रात घनेरी बच्चों के आस-पास चहकते स्वर याद कर दिल बेकाबू हो जाता।तकनीकि का तहेदिल से शुक्रगुजार करूं कि सोने से पहले बच्चों के साथ उनकी मम्मी की स्वास्थ्य के प्रति सजग झिड़की सुन चैन से सो जाता।उंगलियों पर गुजरते दिन पहाड़ से लगते।होली के दिन बाहर की हुदड़ंग सुन मन बहल जाता पर घर के कोने-कोने की मासूमियत मन उद्वेलित कर देती।बच्चों के लड़ाई-झगड़े...धर्मपत्नी का सुबह से चाय पीने की पुकार लगाना, 'उठो!चाय ठंडी हो रही हैं।'
'आप अभी तक उठे नहीं! घडी पर नजर डालिए,कही देर ना हो जाये।'
'तैयार हुये कि नही...दो कप चाय बनी-बनाई पानी हो गई। नाश्ता लग गया हैं जल्दी से आ जाईये।'

पीछे से बच्चों की चुहलबाजी नाक में दम कर देती थी पर आज...।उदास मन से एक ठंडी सांस खींचकर बालकनी में पड़ी आराम कुर्सी पर पसर गया।घर-परिवार की रौनक वास्तव में गृहणी और बच्चों से ही होती हैं।जितना अपने-आप पर नियंत्रण करता उतना ही मन बेहाल हो जाता।घबराहट होने लगी,निढाल होकर वही कुर्सी पर पड़ा सोचने लगा कि कहीं नहीं जाऊंगा तभी डोरबेल सुन दरवाजा खोला तो सामने साहू साहब रंगे-पुते खड़े थे।
मजाकिया अंदाज में बोले, 'क्यों भाई!चलना नहीं हैं क्या? होली खेलते हैं। '
मैंने चेहरे पर झूठी हंसी लाकर कहा, 'नहीं यार,इस बार नहीं...।'
'अरे भई,क्यों नही!इस साल तो भाभी जी नदारद हैं...रोकने-टोकने के लिए...।'
'नहीं...नहीं आप ही होली खेलिए।'
'क्या मूड खराब किये बैठा हैं! एक-दो गिलास ठंडाई डकारेगे तो मिजाज खुद वा खुद खुशमिजाज हो जायेगा।'
मैंने पीछा छुड़ाने के लिए बेरूखी से कहा, 'तबियत जरा नाखुश हैं,मितली सी...।'
साहू ने तुरंत पास आकर मेरा हाथ पकड़कर डाॅक्टरी अंदाज में चेक करते हुये शिकायती लहजे में कहा, 'यार,तुम भी कमाल करते हो!मैं जब से नोनस्टाॅप बकबक किये जा रहा हूं। चलिए उठिए,डाॅक्टर से जांच करवाकर आते हैं।'
'तुम नाहक ही परेशान होते हो।घर मे दवा पड़ी होगी,उसे ले लूंगा।तुम अपनी होली क्यों खराब करते हो।'
साहू ऑखें तरेरते हुये तुनककर बोले, 'कैसी बात करते हो तिवारी जी!मैं कोई पराया हूँ, चलिए...नहीं तो घर पर ही...।'

अपने हितेषी साहू के नेक इरादे समझ तुरंत खड़ा हो गया।
डाॅक्टर साहब होली का मजा ला रहे थे।जान-पहचान के होने के कारण तुरंत पास के कमरे में ले जाकर बिठाया और नब्ज पकड़कर परीक्षण करने को कान में आला लगाकर दिल की धड़कने सुनी,रक्तचाप नापते समय डाॅक्टर साहब की ऑखें ऊपर चढ़ गई।मुझे शंकित नजरों से देखते हुये कहा, 'तिवारी जी ये क्या!आपका उच्च रक्तचाप दिखा रहा हैं।'

मैंने अंजान बनकर कहा, 'पता नहीं, कुछ ही दिनों से घबराहट बनी रहती हैं।'
दोस्ताना अंदाज में मजाक करते हुये कहा, 'भाभी बच्चों को लेकर मायके होली मनाने चली गई...सूनापन खलता हैं, मन बैचेन रहता हैं।'
मेरी दुखती नब्ज पकड़ में आ गई।मैं हिचक-सा गया।मेरी असमंजसता देख तसल्ली देते हुये डाॅक्टर साहब ने कहा,

'ये गोलिया हैं, सुबह-शाम खाना खाने के ह द ले लेना,चैन की नींद सोओगे,सब ठीक हो जायेगा।'

धन्यवाद कह साहू ने मेरी देखभाल करने खुद रूकना चाह पर मेरी जिद भारी पड़ गई। रवानगी कर किचिन से रात का खाना अनिच्छा से निगला और पानी के साथ गोली गटक बिस्तर पर लेट हो गया।पर नींद तो कोसो दूर थी।मन बहलाने मनोरंजन का बक्सा खोला तो मन प्रफुल्लित तो हुआ नहीं बल्कि होली के रंग भरे गानों को सुन व्याकुल हो उठा।खीझते हुये बंद कर सोने की कोशिश की।काफी मशक्कत करने के पश्चात करवटें बदलते हुये कब नींद लग गई पता ही नहीं चला।

दूध वाले की आवाज से ऊनींदे मुंह से दरवाजा खोला तो उसने लटके चेहरे को भांपते ही पूछा, 'का साहेब,रात ठीक से सोये नहीं।'

अनमना सा किचिन में गया चाय की तलब मिटाने...इधर-उधर खोजबीन कर कही जाके चाय बनाने की भगोनी मिली।गैस पर चढ़ी भगौनी में दूध,पानी,शक्कर, चाय पत्ती डाल उफनती बुलबुलाती चाय की तेज खुशबू नासाछिद्रों में घुसते ही एहसास दिला गई कि मेरी जिन्दगी की खुशबू तो मेरे अपने बच्चों से हैं...एकाकीपन की कचोट अंतर्मन को आघात कर गई।अपनी जीवन की प्राणवायु के बिना बेजुबान लाश सा बैचेन दिल दिन-रात डाॅक्टरों के चक्कर लगाने लगा।ऑख,नाक,कान,गला,दिल-दिमाग सबकी जांच निल बटे सन्नाटा...अब तो उनके ननिहाल से लौटने के इंतजार के सब्र का बांध टूट गया और बिना किसी मर्यादा की परवाह किये बिना दो जोड़ी कपड़े सूटकेश में डाल बाहर निकल ही रहा था कि साहू ने मुझे ऊपर से नीचे निहारते हुये हाथ में पकड़े सूट को पैनी निगाह से देखते हुये कुटिल मुस्कान में कटाक्ष करते हुये कहा, 'तो जनाब,देर आए,दुरस्त आये...।'

मैंने सकपकाते हुये लड़खड़ाती जुबान से कहा, 'क्या मतलब आपका...?'

'मतलब साफ हैं...जाने का मन बनाते ही आधी तबीयत दुरस्त हो गई। और फिर तिवारी जी,आप अपनी धड़कनों को क्यों जाने की इजाजत देते हो?'

'अरे...ऐसा कुछ नहीं आप तो नाहक ही...।'

'अब छोड़िये भी,आपके चेहरे को अंधा भी देख आपकी पीड़ा की दवा बता देगा।और मैं तो भई भाभीजी की गलती कहूंगा,भला कोई त्यौहार पर ऐसा अकेला छोड़ कर जाता हैं वो फाल्गुनी रंगों की बहारों पर...।'

मैंने नकारते हुये कहा, 'वैसे कभी मुझे एकपल के लिए कभी इसतरह छोड़ा हो,वो क्या हैं ना...इस बार बहनें, सहेलियां बच्चों की छुट्टियाँ होने के कारण इकट्ठी हो रही थी सो बस मैंने ही...।'

'छोड़ों भी यार तरफदारी करना...कही साफगोई के चक्कर में ट्रेन छूट गई तो बस सब मंसूबों पर पानी ना फिर जाये।'

साहू की बात सुन कान खड़े हो गये...कहीं ट्रेन छूट गई तो...वही काट खाने को दौड़ता घर...मुंह चिढ़ाते किचिन के बर्तन...कानों में गूंजते बच्चों की खिलौने के संग किलकारी...मन को झटका दे तुरंत ताला चटका साहू को अलविदा कह लंबी डग भरता हुआ निकल पड़ा रेल्वे स्टेशन की ओर।मन में हजारों सवाल लिए छुकछुक करती गाड़ी में खिड़की से आते ठंडी हवा के झोंको ने झिझक...खिल्ली ना उड़े सब को काफूर कर दिया।

अचानक से ससुराल के मेरे पर्दापर्ण ने सबको हक्का-बक्का कर दिया।फिर संभलते हुये मेरी तीमारदारी में जुट गये।आवभगत करती साली साहिवा ने चुटकी लेते हुये कहा, 'रंगों के त्यौहार का मजा तो अब आएगा,क्यों जीजाजी....!'

मैं अपने आपको घिरा पा अचकचाते हुये बोला, 'कैसी होली!होली तो खत्म हो गई...अब क्यों बेवजह का हुदड़ंग... ।'

सब साली-सलहज एकसाथ बोल पड़े, 'जी नहीं! होली तो अब शुरू होगी...!'और कहने के साथ ही सब टूट पड़े।नानकुर करने पर भी होली का रंग जम गया।खुशियों से भरे मन में बैचेनी कहां ठहरने वाली थी।होली खेलते बीबी बच्चों को देख दिल का दर्द काफूर हो गया था...बैचेनी...बीमारी का उपचार मिल चुका था।

सुभाष सेमल्टी

देहरादून,उत्तराखंड

फुहार

पिचकारी लाई भर,
डारे वा फुहार छर।
आज गोरी करे सर,
रंगों की बैछार।।

यहां वहां बच रही,
मुझ से वो भाग कही।
लगाने न दूंगी रंग,
मुझे न निहार।।

मैने भी न हार मानी,
चल पिचकारी तानी।
छर से जो डाला पानी,
हो गया श्रृंगार।।

पत्नी संग खेली होली,
बस करो वह बोली।
थोड़ा और हम जोली,
हुआ..... मनुहार।।

कहानी

डॉ संदीप शर्मा
निवासः हाउस न. ,618 वार्ड न.,1
कृष्णा नगर, हमीरपुर,
हिमाचल प्रदेश
177001

खड्ड पर बाँध

गाँव का वह कोई पहला आदमी नहीं था जो शहर से यह ख़बर लाया था कि गाँव की खड्ड पर सरकार एक बाँध बनाने वाली है। यह खबर जंगल की आग की तरह फैली थी। गाँव वालों के चेहरे पर उदासी के काले बादल छा चुके थे। कोई सोच भी नहीं सकता था कि एक मामूली सी खड्ड पर सरकार आख़िर इतना पैसा खर्च करके बाँध क्यों बनाएगी वैसे भी यह वही खड्ड है जो ज्येष्ठ में मात्र एक कुल्ह में ही समा जाती है। शिवालिक की पहाड़ियों में बसा यह गाँव खड्ड से कोई 2 कोस दूर होगा। गाँव की कुछ जमीन खड्ड के एक किनारे पर है पर खड्ड में तो ज्येष्ठ के महीने में लगभग पानी सूख ही जाता है, मछलियाँ टोबों में इकट्ठी होकर कुछ दिन साँसें लेती हैं और फिर वे भी चालाक मुरकाबियों के पेट में जाकर आराम करती हैं तो फिर इस बेजान खड्ड पर बाँध की क्या सूझी! गाँव वाले खुलकर एक दूसरे से बाँध के बारे में बात भी नहीं करना चाह रहे थे। दुनिया तो सबकी ही लुटने वाली है, शायद यह अफवाह ही न हो, किसी ने जान बूझकर बात फैला दी होगी।

गाँव वाले तो बस अपनी -अपनी ज़मीन के डूबने का हिसाब लगा रहे थे। कई ज़मीन के बदले मिलने वाले पैसों को गिनने और उनसे अपने बासी सपनों को अंकुरित करने में लग गए थे।
गाँव का बंसी और बांकू खड्ड के किनारे वाले धान के खेतों में पानी को मोड़ने जा रहे थे तो एक दूसरे से बतियाने लगे तो बात चल पड़ी। "मुझे तो लगता है किसी ने गलत सुना होगा। सबसे पहले कौन लाया है यह खबर?" बांकू बोला, "मैंने तो यह बात मैहतो से सुनी, उसने किससे सुनी होगी यह मुझे नहीं पता।" बंसी बोला, "अरे बाँध ऊपरी जिलों में बनते हैं, वहाँ साल भर खड्डों, नालूओं में अथाह पानी बहता है, यहाँ तो बिजली भी नहीं बन पाएगी।"
"जो भी हो पर गाँव तो उजाड़ पड़ ही जाएगा।"

"अरे! मुझे तो लगता है कि ऊपरी इलाके के बारे में कोई बात कर रहा होगा और सुनने वाला इस बुरी ख़बर को हमारी खड्ड से जोड़ बैठा।"

वैसे सभी ने अनुमान लगा लिया था कि बाँध बनेगा तो गाँव को कोई असर नहीं होगा। खड्ड गाँव से बहुत दूर और गहराई में है। दो धारों के बीच को पाटती निकलती है, खड्ड की चौड़ाई कहीं - कहीं तो एक कोस से भी ज़्यादा है और कहीं कोई 500 फुट। खड्ड के दोनों ओर जितने भी गाँव बसे हैं, सब ऊँचाई पर ही हैं। वैसे भी सदियों से बहती यह खड्ड पूरे जिले की सबसे बड़ी खड्ड है। पर बाँध क्यों बनेगा? यह कोई सोच नहीं पा रहा था।

धीरे - धीरे इस ख़बर का असर भी होने लगा। गाँव के फकीरू घराटी ने जब यह ख़बर सुनी तो जैसे उसकी दुनिया ही उजड़ गई, बस उसकी जैसे जुबान चली गई थी। वह पगला सा गया था जो हमेशा अपने घराट को छोड़ता नहीं था, उसे जैसे घराट से नफ़रत हो गई थी, उसे जैसे घराट वर्षों बाद बनकर तैयार होने वाला बाँध नज़र आ रहा था।

बीच-बीच में अब उसने घराट में जाना भी बंद कर दिया था। अब जो फकीरू कभी गाँव में दिन में इधर - उधर नज़र न आए, वह अब इधर - उधर नज़र आने लग पड़े तो अचरज़ तो होना ही था। "अरे फकीरू! तू भई घराट में ताला लगा आया है क्या आजकल यहीं दिखाई दे रहा है।" गाँव के बुजुर्ग पैन्नू ने पूछा।
"अब क्या बताऊँ चाचा, घराट का क्या पता कब तक चले, तो फिर खेतों की ही सुध ले लेता हूँ, अब तो खेत ही दो वक्त का अन्न देंगे ।""अरे क्या बात हो गई, तुम तो उदासी भरी बातें कर रहे हो।"

'चाचा, अगर बाँध बना तो घराट तो सबसे पहले ही डूबेगा, गाँव तो खड्ड से बहुत ऊँचाई पर है, पर घराट तो जाएगा ही न तो फिर अब घराट का मोह ख़त्म कर बैठा हूँ।"
"वाह भई !तुम तो अच्छे आदमी हो, अरे जब बाँध बनेगा, तब देखा जाएगा, तू अभी से सब छोड़ आया। जैसे उन्होंने सबसेे पहले तेरे घराट को ही तोड़ना हो।" दोनों अपने रस्ते हो गए, पर इसके बाद भी फकीरू अब लगभग गाँव में ही दिखाई दे रहा था। खड्ड के किनारे लोगों के धान के सैंकड़ों खेत हैं जिन्हें कोल्हा कहते हैं। धान के साथ -साथ गेहूँ, प्याज, अरबी, आलू की फसलें भी खूब होती हैं।

बरसात में जब कभी-कभार ख़्वाजा अपने सात घोड़ों पर सवार होकर आता तो कई खेतों को भी उड़ा को ले जाता पर कुछ ही सालों में लोग फिर खेत बना लेते। पुराने खेतों पर पानी गुजर जाता और कोल्हे अब भी टिके हैं, सदियों से। पर कोल्हे के छप्परों 'अस्थाई घरों' का क्या होगा? ये सोचा जा सकता था।
पैन्नू राम, मैहर का, भागीराम का और ऊपरी कोल्हे में खजानू का, संतू का, रत्तो के छप्पर तो उड़ ही जाएँगे मतलब उन्हें उखाड़ना पड़ेगा, जब बाँध का पानी भरेगा। यह सब गाँव के लोगों के पीपल के टियाले पर होने वाली बातचीत में पक्का हो गया था।मैहर के घर में रात की अँगीठी पर भी गाँव वालों ने कई तरह की और योजनाएँ बना डाली थी। "कोल्हा तो जाएगा ही, आस-पास के दो तीन ऊपरी गाँव वालों के खेत भी जा सकते हैं। सोहरी गाँव के भी खेत भी गए।" संतू ने आग सेकते हुए अपना तुजुर्बा झाड़ दिया था । आज बड़े दिनों के बाद मैहर की अंगीठी पर फकीरू फिर आया था। उसके आते ही संतू ने बात फेंक दी, "आजा फकीरू, घराट से आया कि घर में ही था, तेरे घराट के भी अब थोड़े ही दिन बचे हैं।" फकीरू सफ़ेद पड़ गया। "क्या कहते हो ठाकुर जी? गरीब की रोटी पर मज़ाक नहीं करते "!सबने देखा कि फकीरू आग सेकने से पहले ही परेशान हो गया। "अरे ऐसी बात नहीं है, तू ताँ बुरा मनी गया। अरे यहाँ कोई भी नहीं बचेगा, हमारी ज़मीन भी डूब जाएगी।"

मैहर ने बात बदली, "और सुना फकीरू, आज बड़े दिनों के बाद आया तू, वैसे सर्दियों में तो तू आ ही जाता था घराट से रात को, इस बार ये लोग बड़ी बुरी खबर लाए हैं। पर तू चिंता न कर, घराट शायद बच जाएगा, बड़ा दूर है तेरा घराट।"
फकीरू चुपचाप घर की ओर निकल पड़ा था। बरसात ने दस्तक दे दी थी। अगले साल किसी ने फिर ख़बर फैलाई कि कुछ आदमी खड्ड के आसपास देखे गए, हो न हो वे सर्वे वाले ही होगे। गाँव में फिर चर्चाओं का मौसम आ गया था और साथ में सावन का महीना भी शुरू हो गया था। लोगों ने पहले से ही मक्की बीज दी थी, अब तो फुट भर खेतों से बाहर निकल चुकी थी। बाकी बरसात अपना काम करेगी। गाँव वाले बरसात में सिर्फ़ पशुओं को हरा घास लाते हैं, इसके अलावा कभी धान के खेतों के बीच उगते खरपतवारों को उखाड़ते हैं, पशुओं के नीचे बिछोने के लिए नर्म झाड़ियाँ लाते, औरतें घास काटती और मर्द अपने कंधों पर उठाकर ढेर लगाते जाते। खड्ड में जब पानी बढ़ जाता तो पानी कुल्हों से होते हुए पूरे धान के खेतों से होता हुआ फिर खड्ड में चला जाता।पूरा गाँव हरियाली से ढकने लगा पड़ा था। अभी तो मध्यम दर्जे की बरसात हुई थी पर पूरी भी होगी और फिर खड्ड पूरे कोल्हे से होकर बहेगी, कहीं भी जगह नहीं बचेगी। सर्वे वाली ख़बर फकीरू तक भी पहुंच गई थी। वह घराट की ओर निकल गया था। उसका मन ज्वर ग्रस्त हो चुका था, उसे दिन रात बस यही ख़्याल आ रहे थे कि बाँध में सबसे पहले उसी का घराट डूबेगा, खड्ड उसके घराट के थोड़ा नीचे ही सबसे ज्यादा तंग है, मतलब उसने अपने मन में पूरा नक्शा बना लिया था कि बाँध बनेगा तो इन्हीं घराट के नीचे वाले सप्पड़ों के बीच बनेगा। उसके मन के ज्वर ने उसको नष्ट करने की ठान ली थी। निराशा के बादल खड्ड के उस पार उतरने लग पड़े थे, सारा आकाश भर चुका था। छमा-छम बरसात फकीरू के घराट के ऊपर बरसने लग पड़ी थी। चहुँ ओर सावन की मस्ती छाने लग पड़ी थी। फकीरू के घराट के बटों ने अब और भी तेज़ दौड़ना शुरू कर दिया था। अनाज पिसता जा रहा था सारे के सारे अनाज के बोरू ख़त्म हो गए थे। बरसात में लोग बच - बचा कर आए और आटे के बोरूओं को ले गए। फकीरू ने घराट का पानी दूसरी ओर मोड़ दिया था। बरसात ने फिर बरसना शुरू कर दिया पर फकीरू ने घराट बिना अनाज के बंद होने पर घर न जाने का फ़ैसला किया। "क्या करूंगा मैं घर में? सब नष्ट होने वाला है, अब तो निराशा का सावन है यह, इसे भुगतना ही पड़ेगा।" फकीरू आस पास से लाई गीली लकड़ियों को जलाने में लगा था। पूरे घराट में धुँआ फैला था। बहुत सारा बाहर फैल रहा था, बाहर पानी की बूँदे धीरे -धीरे बरस रही थी।
एक गंभीर आवाज़ सुनकर वह बाहर निकला। उसके सामने एक चांदी सी सफेद दाढ़ी वाला अधेड़ व्यक्ति भीगे कपड़ों में खड़ा था। उसके हाथों में थैला था। वह बोल पड़ा, "दूर रिश्तेदारों के यहाँ अपने बेटे के ब्याह का न्यूंद्रा देने जा रहा हूँ, दूर से आया हूँ, थोड़ा आराम कर लेता हूँ।" "हाँ आ जाओ महाराज, आग जलाता हूँ कपड़े भी सुखा लो।"

अच्छा, यहाँ अकेले रहते हो, बड़ी एकांत जगह है।"
"आओ आग सेक लो, बड़ी मुश्किल से जली, अब बरसात में सूखी लकड़ियाँ बड़ी मुश्किल से मिलती हैं, अच्छा हुक्का जलाता हूँ, पीते तो होंगे।" "हाँ, हाँ, मैं फौज से रिटायर हुआ हूँ, अभी शौक पड़ा है वरना फौज में तो बीड़ी भी नसीब नहीं। खड्ड दूर है, पर कुल्ह में पानी बहुत आने लग पड़ा है इसे रोकना होगा, इससे नुकसान हो सकता है जनाब। वैसे घराट भी तो खाली है आजकल कोई अनाज पिसवाने नहीं आ रहा।"
फकीरू उदास सा बोला, "बस साहब खड्ड में पानी ज़्यादा है उस पार लोग आ नहीं रहे, इस तरफ वाले कभी आ जाते हैं, मुझे तो बैठना ही पड़ता है चाहे घराट चले या न चले। अब तो साहब बस घराट के बहने का इंतज़ार कर रहा हूँ, ख़्वाजा से बच गया तो ठीक वरना...।"
"अरे तुम भी कैसी बातें करते हो !अच्छा मैं निकलता हूँ, वर्षा तो थमने का नाम नहीं ले रही है।"

दो कश हुक्के के लगाने के बाद फौजी अपने रास्ते निकल गया। उसके जाने के बाद फकीरू फिर उदास हो गया। छमा छम बारिश हो रही थी। खड्ड में बाढ़ बढ़ती जा रही थी। उसने देखा कि सचमुच ही कुल्ह पानी से लबालब

थी, पानी कुल्ह के बाहर बह रहा था। उसने एक दम फावड़ा उठाया और सारा पानी घराट की ओर मोड़ दिया। घराट के बट इतने दौड़े और फिर एक दूसरे पर लुढ़क गए, पानी घराट के अंदर बहने लगा। घराट का तल नीचे बह गया, लकड़ी के खंभे एक दूसरे में फँस गए। फकीरू एक चक्कर लगाने घर की ओर निकल गया था। सुबह फकीरू के वापिस आते ही सिर्फ़ घराट के अस्थि पिंजर बचे थे, बाकी सब तहस-नहस हो गया था। फकीरू के चेहरे पर यह सब देखकर बड़ी शांति सी थी। उसके मन की बाढ़ जैसे शांत हो गई थी।

वह घराट के बाँध की ओर निकल गया, जहाँ उफनती खड्ड में तेज़ बाढ़ थी, घराट के बाँध का कहीं कोई निशान नहीं था। सिर्फ़ किनारे पर कुल्ह के आस पास कुछ पत्थर बचे थे और पानी तेज़ प्रवाह से कुल्ह के ऊपर से बह रहा था। फकीरू ने घराट का बचा सामान उठाया और जैसे ही वह घर पहुऊचा, उसके चेहरे पर एक अलग सी खुशी थी क्योंकि सचमुच ही घराट उजड़ चुका था, पर अब वह बिल्कुल शांत था, बरसात अभी भी थी। मैहर ने हुक्के की चिलम के लिए आग जलाई थी। अब आते ही वह सीधा मैहर की अँगीठी पर आ धमका। वहाँ पहले से ही पाँच छः लोग बैठे थे। आते ही उसने सबकी ओर मुस्कुराते हुए देखा और अँगीठी के पास बिन्ने पर बैठते ही बोला, "अच्छा तो महाराज! अब यह सुनाओ कि बाँध का काम कब शुरू हो रहा है।'

संतू ने फकीरू के चेहरे पर सरसरी नज़र डाली और हुक्के को अपनी ओर खींचकर कश मारकर बोला, "भई फकीरू, तेरी चिंता अब ख़त्म। सरकार का एक फरमान आ गया है कि बाँध अब कोई बीस कोस नीचे बनेगा, हमारा कोल्हे की धान वाली ज़मीन बच गई और साथ में तेरा घराट भी बच गया।" फिर संतू के हुक्के की गुड़गुड़ाहट बरसात की तेज़ गिरती बूँदों में घुलने लगी।

पूजा शर्मा

मुजफ्फरनगर उत्तर प्रदेश

प्रेम

बिन बोले समझे हाल दिल का
मीत मन का वही हो सकता है
दूर रहकर भी ना दूर हो मन से
एक डोर दूजा पतंग हो जैसे
बंधे हो प्रेम की डोरी के बंधन से
रिश्ता वही मधुर बन सकता है
समझे अनकही वेदना दिल की
हंसी में छुपा जो दर्द पहचाने
वो दिल का टुकड़ा हो सकता है
अपने सुख से ऊपर खुशी हो प्रिय की
जो जाने सब व्यथा हृदय की
प्रेम वही बस कर सकता है
प्रेम सबके बस की बात नहीं है

दिल से दिल के सौदे होते हैं
प्रेम कोई व्यापार नहीं है
स्वीकार करें वियोग भी राधा सा
वही प्रेम की भाषा समझ सकता है
प्रेम व्यापक है सृष्टि में ईश्वर के जैसा
प्रेम अनंत है आकाश के जैसा
प्रेम की कोई थाह नहीं है
समझी उसी ने प्रेम की परिभाषा
महसूस जो दिल से कर सकता है
अहंकार का नाम नहीं है
समर्पण और विश्वास यही है
सच्चा प्रेम वही हो सकता है
वही मीत मन का हो सकता है

कहानी

बृजन्नदन प्रसाद 'वियोगी
"श्याम सुदारी निवास
158/1शारदा पल्ली सेक् -2
पो0: मकला 712245
जिला–हुगली (प. बंगाल)
ईमेल :bnprasadviyogi@gmail.com

सहोदर

जब जमुना जी रात के दस बजे सोने जा रहे थे , तभी किसी ने किबाड़ की कुंडी खटखटायी । इतनी रात को कौन हो सकता है ? भय और दुबधा में डुब गये थे। क्योंकि ग्रामीण लोग प्रायः जल्द सो जाते है या अन्तहीन टीवी धारावाहिक देखते रहते है। अन्तहीन इसलिये कि धारावहि का अन्त कब होगा पता नहीं पर दर्शक की दो पीढीयों का अन्त जरूर हो जाता है। जब जमुना जी किबाड़ खोले तो उनका भाई जगदीश खड़ा था । तब वे निर्भय हो बोले," अरे, जगदीश तू –। आ अंदर आ ।"

जगदीश भारी मन से ,उदासी में डुबा अंदर गया और भाई के साथ बैठक में बैठ गया। कुछ क्षण तक वातावरण शान्त रहा । भाई के चेहरे पर तनाव तथा गमगीनी देख ,जमुना जी पूछे," क्या बात है, जगदीश ? परेशान लग रहे हो।" "एक मुसीबत में फस गया हू ,भइया।" जगदीश रूंआसा होकर कहा," पत्नी का गाल ब्लडर का पटना ले जा कर आपरेशन कराना पड़ेगा।"

"तो इसमें घबड़ाने की क्या बात है। विज्ञान की उन्नति से इस तरह का आपरेशन तो सुरक्षित और सुगमता से हो जाता है।"

फिर भी जमुना जी महसूस कर रहे थे कि भाई कुछ कहना चाहता है पर हिचकिचा रहा है ,सो उसने स्वंय पूछे," कैसे आना हुआ ,जगदीश।"" मुझे कुछ–––। "जगदीश आगे बोल नहीं पाया। " बोल जगदीश, चुप क्यों हो गया।"

"मुझे पचीस हजार रूपये चाहिये, अपरेशन के लिये।"

जगदीश जी का मन चाहा कि कहे,'पाकेट में कुछ रूपया आते ही ,अहं और अहंकार में कितना चमक रहा था। चार दिन की चांदनी फिर अंधेरी रात। जो हाथ पसारने आये हो उस हाथ में हुनर था काम छोड़ कर क्यों बैठ गया? अगर काम करता रहता तो हाथ पसारने की नौवत कभी भी नहीं आती। यह तुम्हारे गलत निर्णय का परिणाम है 'पर मन मसोस कर चुप रहे क्योंकि दुःख तकलीफ में सत्य बात भी कड़वी लगती है। अपमानित महसूस करता है। सो फिर सहज होकर बोले ," इसमें शरमाने की क्या बात है ? हम अपने है। मदद हम न करेंगे तो कौन करेगा ? किसके पास जाओंगे ?"

भाई की उदारता देख लज्जित हो गया था , जगदीश। अब तक भाभी गौरी भी चौका समेट आकर बैठ गयी थी।

" दोनो लड़के संस्कारहीन हो गये है। बड़ा लड़का को रूपये के लिये बोला तो कहा , मैं स्वंय कंपनी से अग्रिम ले कर बेटे को स्कूल में भर्ती कराया हूं , किताब ,कौपी ,ड्रेस आदि लिया हूं। छोटा लड़का को बोला पत्नी को एक महीना के लिये भेज दो ,मां ठीक–ठाक हो जायगी तो ले जाना तो नखरा करने लगा।" " बच्चे को क्यो कोसते हो ,जगदीश ?" गौरी भाभी नें कहा," उसका भी अपना परिवार,पढ़ायी–लिखायी,कपड़ा–लता में खर्चा है।बाहर शहर में रहने वाला कितना, कबतक सहारा बनेगा। हमें ही एक दूसरे के लिये सहयोग , सहारा बनना पड़ेगा। जब मैं बीमार पड़ी थी तो छोटी सहारा बनी थी न। रसोई के साथ–साथ घर भी सम्हाली थी। बेटे– बहू दिल्ली से थोड़े आयी थी। सिर्फ आर्थिक मदद नहीं ,दुःख विपत्ति में अपनो की समीपता भी जरूरी होती है। इससे आत्मविश्वास बढ़ता है।"

कुछ देर सोचने के बाद पुनः गौरी भाभी नें ढाड़स बंधाते हुये कहा," हमलोग है न चिन्ता क्यों करते हो ? जबतक छोटी पूर्णतः ठीक न हो जाय ,हमारे यहां दाल–रोटी खाते रहना।"

" देखो जगदीश, भाई–भाई में संपत्ति का बटबारा होना समाजिक प्रम्परा है । समय पर इसे होना भी चाहिये तांकि परिवार के बीच कटुता नहीं बढ़े। पर अलग होने पर भी परिवारों के बीच अपनापन,स्नेह, सहयोग बना रहना चाहिये ,इसमे बटबारा नहीं होना

चाहिये। महाभरत में पाण्डव बंधु ,रामायण में दशरथ पुत्रों को जानते हो । सतेला भाई होते हुये भी आपस में कितना प्यार और विश्वास था। एक दूसरे के लिये मरने और मारने के लिये तैयार रहते थे।"

"वचपन में जब मुझे पिता जी बदमाशी करने पर कमरे में बंद कर देते थे तो तुम चुपके से ि खड़की से खाना देता था न। जब बाहर में कभी भी झगड़ा–झमेला होता था, तो हम दोनों एक दूसरे के लिये खड़े हो जाते थे न। आखिर क्यों ? क्योंकि खून के रिस्ते में अपनापन ,स्नेह और उबाल होता है। तुम घबड़ाओ मत।हमारा सहयोग तुम्हें मिलता रहेगा ।"

भाई की आत्मीयता ,अपनापन तथा सरलता देख ग्लानि महसूस करने लगा था,जगदीश। कितना अकड़ता था जब जमुना जी कर्ज में थे। वास्तव में मनुष्य धन के आगमन से अहं में अपना आदर्श भी भूल जाता है।

जमुंना जी जब सोने गये तो उन्हें नींद नहीं आ रही थी। भाई जगदीश की आर्थिक पंगूता , विवश्ता तथा एक समय के अपने प्रिय संतानों के प्रति घृणित भावना देख दंग रह गये थे। उसनें तो स्वय अपने बुढ़ापे पर कुल्हाड़ी मारी है। साथ ही संतान का भविष्य भी बर्बाद किया है। संतान की इच्छाओं को उसने पूरा किया है ,क्या ? फिर संतान से क्यों उम्मींद रखता है ?

जगदीश जी की मानसिकता ,सोच का दायरा इतना संकुचित था कि वे संतान की उन्नति , भविष्य के बारे में कभी भी गंभीरता से न सोचे थे न किसी से सलाह करते थे। यही कारण था कि जब बड़ा लड़का मैट्रिक किया तो ऊच्ची शिक्षा देने के बजाय मामा के ट्रांसपोर्ट कंपनी टाटा में 15–20 हजार के मासिक वेतन में डाल दिये थे । उसी प्रकार छोटा लड़का भी कुछ दिन बाद उनकी अन. मति से गांव के साथियों के साथ लुधियाना कमाने चला गया था। तब वे अति गर्वान्वित महसूस करते थे, बेटों के कामयावी पर।

वही जमुना जी दूरदर्शी थे। कोई भी निर्णय लेने के पहले बिंदु वार उससे लाभ–हानी , तात्कालिक और दूरगामी परिणामों पर ठोक–ठठा कर मूल्यांकण करते थे ,तब निर्णय लेते थे।

यही उनकी उन्नति का आधार था। पुत्र की प्रतिभा तथा उसकी इच्छा को देखते हुये अभाव के वावजूद भी उसने ऊच्च शिक्षा के लिये तत्पर रहे थे। वे महसूस करते थे कि शिक्षा ही एक मात्र वह शस्त्र है जो गरीबी के दलदल से निकाल सकता है। कष्ट सहे , जिह्म और मन पर लगाम लगाये थे। खेत और पत्नी के जेबर तक गिरबी रखे थे। पर पीछे मुड़ कर नहीं देखे थे।

जमुना जी द्वारा उठाये गये कदम उस समय जगदीश जी के लिये फिजूलखर्ची के सिवा कुछ नहीं था ।तभी तो उसने व्यंग किया था ,"धन भी जायगा और नौकरी भी नहीं मिलेगी। आज कल प्रतिभा ,योग्यता ,डिग्री का कोई मूल्य नहीं है,भइया। सोर्स ,जान–पहचान होने से ,घूस देने पर अयोग्य व्यक्ति को भी नौकरी मिल जाती है और प्रतिभावान ,योग्य व्यक्ति सड़कों पर नौकरी के लिये भटकता रहता है। मेरा दोनों लड़का कम पढ़ा–लि खा है, फिर भी 15–20 हजार रूपया कमा तो रहा है , सड़कों पर भटक तो नहीं रहा है न।"

जमुना जी को भी समझ थी कि भ्रष्टाचार , भाई–भतीजावाद ने देश की व्यवस्था को पूर्णतः ध्वस्थ और पंगू बना दिया है। ईमानदार ,योग्य और कर्मठ व्यक्ति हलकान और परेशान है। फिर भी उन्हें विश्वास था कि प्रतिभा ,योग्यता कभी न मरती है न बेकार जाती है। सो वे जगदीश के भ्रम दूर करने के ख्याल से कहते थे ," आज भारत की प्रत्तिभा, प्रतिस्पर्धा के जमाने में भी दुनिया में ताल ठोककर बड़े–2 प्रतिष्ठित और ऊच्चें पद पर कब्जा जमाये शान से बैठा है। रूपये से खरीदी गयी ऊंच्च डिग्रीधारी व्यक्ति ही सड़कों पर भटक रहे है , जगदीश। शिक्षा का क्या महत्व होता है, एक दिन तुम जरूर समझोगे।"

जैसे–जैसे समय गुजरते गया था ,जमुना जी का मेहनती,संस्कारी तथा कर्मनिष्ठ पुत्र रवि सफलता की सीढियां चढ़ता गया था।सीए ,एमबीए फिर कास्टीगं की डिग्री से अपने को सजा लिया था। फिर उसका चयन भारत सरकार के कस्टम विभाग में सहायक आयुक्त के पद पर हो कोलकता में पोस्टीगं हो गयी थी। साल भर के अंदर ही घर की सारी व्यवस्था ठीक हो गयी थी। फिर धुमधाम से शादी कर जमुना जी अपनी अंतिम जिम्मेदारी भी पूर्ण कर दिये थे।

जमुना जी का मोदीखना की दुकान जैतीपुर के बीच बाजार में थी। दुकान के पीछे ही निवास था। जैती पूर एक ग्रामीण बाजार है,जहां आस–पास के ग्रामीण लोग सौदा–पानी ,साग–सब्जी आदि लेने आते थे तथा शाम ढलते–2 लौट जाते थे। जैसे–2 ग्रामीणों की आवश्यकता बढ़ती गयी थी ,जैती पूर बाजार भी विस्तार लेते गया था। ब्रांडेड कपड़े , बिजली–पंखे ,टीवी ,टाइल्स , मोबाइल छड़ सिमेंट

की दुकान खुल गयीं थी। औनलाइन एप्लायी होने के कारण अनेक कम्पयुटर कैफे खुल गये थे जिसके कारण अब इस्लामपुर बाजार कम जाना पड़ता था। जमुना जी की दुकान का भी विस्तार हुआ था। उम्र के ढलाव के कारण एक नौकर रख लिये थे। प्रत्येक ग्राम–2 तक सड़कों के निर्माण के कारण टोटो ,औटो के साथ–2 बस पड़ाव भी बन गया था जहां से पटना ,विहारशरीफ ,गया ,नालन्दा ,रजगीर के लिये बस खुलती थी। जैती पुर धीरे –धीरे एक कसवा बनता जा रहा था। किसी भी व्यवसाय में शालीन और सहनशील होना जरूरी होता है सो यह गुण जमुना जी में भरा हुआ था। वे उदार प्रकृति के व्यक्ति थे। मजबूर व्यक्ति को उधार सौदा–पानी दे देते थे तथा सार्वजनिक कार्यक्रमों में हमेशा आगे रहते थे जिसके कारण समाज में मान–सम्मान था

सभी जिम्मेदारियों से मुक्त ,जमुना जी पत्नी के साथ अब तनाव रहित आान्नदित जीवन जी रहे थें। पर कृतज्ञ पुत्र रवि और संस्कारी वहू नलनि के मन में हमेशा उनकी उम्र के ढलाव तथा एकाकीपन जीवन से एक खटका बना रहता था। सेा वे लोग अपने साथ कोलकता में रहने के लिये हमेशा दबाव डालते रहते थे।

जो व्यक्ति जिस मीट्टी से वाप–दादे के समय से जुड़ा रहता है ,उसका त्याग करना कितना कष्टदायी होता है ,जमुना जी महसूस करते थे। सो वे पुत्र को शालीनता से समझाते ,"तुम्हारे रहन–सहन का स्तर और परिवेश तथा यहां का रहन–सहन का स्तर और परिवेश में आसमान–जमीन का अंतर है। वहां पिंजड़ा है तो यहां खुला आकाश ; यहां सक्रिय रहता हूं तो वहां पंगू बन कर जीना होगा;यहां आत्म. निर्भर हू तो वहां आश्रित बन कर। हां, जब लाचार, असमर्थ हो जाउंगा तब सोचेगे । मैं जड़ से कट कर शान्ति से नहीं जी पाऊंगा। जिस प्रकार पर्व–त्योहार में कभी तुम कभी मै आते–जाते रहेते है उसी प्रकार आते जाते रहेंगे।"

पिता के तर्क में वजन था ,एक मजबूत आधार था जिसका कोई उचित जबाव पुत्र रवि के पास नहीं था, हठ करने का। पिता की सरलता , समाजिक सक्रियता तथा उपकारिता से अभिभूत ग्रामीण जनता दुःख–विपति में दौड़ पड़ेगे रवि को विश्वास था। फिर भी बेटे–वहू अपनी कृतज्ञता तथा माता–पिता के सम्मानार्थ उनके घर में भौतिक सुःख के सारे साधन ,टीवी ,फ्रीज,एसी ,गिजर, आदि की व्यवस्था कर दिये थे। संतान द्वारा सम्मान से दी गयी सुखी रोटी का एक टुकड़ा भी मां–वाप के लिये अमृत होता है। बेटे–वहू ने तो स्वर्ग को ही घर में डाल दिया है। और क्या चाहिये था।

जब रोग ग्रस्त मनुष्य निरोग होने लगता है तब शान्ति और तनाव रहित महसूस करता है। पर जगदीश की पत्नी जैसे–2 निरोग और स्वास्थ्य हो रही थी ,वैसे–2 उनका तनाव बढ़ता जा रहा था। तनाव का कारण था, पत्नी के स्वास्थ्य होते ही भाई–भाभी द्वारा दिया दी जा रही मुफ्त की दाल–रोटी बन्द हो जायगी। फिर क्या होगा ? उसके गलत निर्णय के कारण आमदनी का सारा स्त्रोत तो बन्द है।

पति को चिन्तित ,उदास देख पत्नी ने पूछा, " क्यो जी, क्या सोच रहे हो ?" कुछ जबाव देने के वजाय ,पत्नी को बैठा कर जगदीश समझाने लगा," आखिर गरीब मजदूर, किसान की संतान पीढ़ी–दर–पीढ़ी गरीब ,मजदूर, अनपढ़ क्यों रहती है ? क्योंकि हम न बड़ा सोचते है ,न बड़ें–2 सपने देखते है न कोई बड़ा लक्ष्य निर्धारित करते है। कूप मंडूप की तरह कूप को ही दुनिया समझ लेते है। जब तुम जितना बड़ा सपना या लक्ष्य देखोगे ,उसी के अनुसार प्रयत्नशील और मेहनत भी करोंगे।"

" मेहनत कभी बेकार नहीं जाती है। भाई साहव ने बड़ा सोचा ,बड़ा सपना देखा, बडा लक्ष्य बनाया तदनुसार ठोस आधार तैयार किये ,संतान को प्रेरित और उत्साहित किये, मेहनत किये तो आज गरीबी के घेरे को तोड़ बहुत दूर निकल गये है। उनके पोता–पोती भी सीए ,बी, टेक कर बहुत दूर निकल जायगे। और हम उसी जगह पड़े है क्योंकिं हमारा लक्ष्य छोटा था। अल्पायु में नौकरी तथा फिर शादी कर हम अपनी जिम्मेदारी से मुक्त तो हो गये पर अपरिपक्व ,अव्यस्क संतान के कोमल कंधो को जिम्मेंदारियों के मजबूत आवरण से इतना तोप दिये है कि न कभी ऊच्ची उड़ान के लिये सोच सकता है ,न अभाव ग्रस्तता के कारण माता–पिता को बुढ़ापे में सहयोग कर सकता है। हाथ में हुनर तथा सक्षम होते हुये भी निष्कृय बैठे है। अगर भाई साहव की बात मान ली होती तो मेंरी ऐसी दुर्दशा नहीं होती।"जगदीश जीकुछ क्षण पुरानी यादों में खो जाते है। "

जगदीश तू काम क्यों छोड़ दिया ?" "लड़कों ने कहा आप इतनी धूप, ठण्ड ,बरसात में क्यों खटते है। अब आराम करे ,हम कमा रहे है , न।"

" देख,जगदीश, जबतक हाथ–पैर चलता रहे ,अपने सामर्थ्य के अनुसार काम करते रहना चाहिये। इससे मन शान्त और तनाव मुक्त जीवन भी रहता हैं। आत्मनिर्भर जीवन का मजा कुछ और होता है, जगदीश।" "बृक्ष लगाये है और फल भी देने लगा है तो मजे से स्वाद चखना चाहिये ,न। "

"बृक्ष का क्या भरोसा ,जगदीश ।आंधी ,तूफान से कब धाराशायी हो जाय ? फिर–?"

बटवारा रोकने के लिये भी भाई साहव ने कितनी कोशिश की थी ,तर्क दिये थे ," अभी बटवारे का समय नहीं आया है ,अभी विकास का समय है। एकजूट होकर प्रयास ,मेहनत से इस गरीबी के घेरे से बाहर निकलने का समय है।" पर संतानों ने कमाई के घमंड पर एक न सुनी थी , " यह चाचा जी की सोची समझी योजना है ,पिता जी। आज हमारी कमाई पर उठना चाहते है ,पर जिस दिन उनकी कमाई आने लगेगी स्वयं बटवारा कर लेगे। जो कल होना है ,आज क्यों नहीं ?" काश उनकी भावना समझ पाते ।

"क्या सोच रहे हो ,जी ?" पत्नी इन्दु नें कहा जिससे जगदीश की सोच का सिलसिला टूट गया था।

"जीने के लिये तो कुछ करना पड़ेगा ,न। पर क्या करे ?" जगदीश रूंआसा होकर कहा।

" मैं सोचती हूं भाइ साहव के दुकान के बगल में जो थोड़ी जमीन परती पड़ी है, उसमे साग–सब्जी और फल की दुकान खोल दे ,तो ?"

" यह तो तुमने सही सोचा है ,इंदु । " कुछ देर सोचने के बाद जगदीश खुशी से कहा ,"इतने दिनों तक राजमिस्त्री का काम छोड़ दिये है ,अब ईट , पत्थर उठाने की शक्ति नहीं है। यही काम ठीक रहेगा "

ठोकर लगने के बाद जो व्यक्ति स्तर देखे विना ,अपने कर्म,विचार ,लक्ष्य में समयानुसार परिवर्तन कर दृढ़ संकल्प से आगे बढ़ता है उसे भगवान के साथ–2 समाज भी सहायता और सुअवसर प्रदान करता है। भाई जमुना जी के पास जाकर अपना प्रस्ताव रखने के लिये जगदीश जी सोच ही रहे थे कि तभी भाई–भाभी कमरे में प्रवेश किये। कुछ क्षण तक तो जगदीश हक्का–वक्का हो सोच में डुबा रहा। जमुना जी खाट पर भाई के बगल में बैठ गये और भाभी गौरी गोतनी इन्दु के साथ चटाई पर।

जगदीश कुछ पूछता ,जमुना जी स्वयं कहने लगे ,"आगामी रविवार को मै और भाभी गौरी चार धाम के तीर्थ यात्रा पर जा रहे है। फिर वहां से कोलकाता बेटे–वहू के पास चले जायगे, पोते–पोती के साथ उछल–कूद करूंगा। चार–छः महीना लग जायगे । सो तुम पर एक जिम्मेदारी सौपना चाहता हूं।" "ठीक है ,भइया। घर की रखवाली मै करूंगा। कुछ भी नुकसान होने नहीं दूंगा आप वेफिक्र रहे।" भाई से उपकृत जगदीश ने अनुमान लगा पहले ही आश्वास्त कर दिया ।

घर की जिम्मेदारी के साथ–2 दुकान की जिम्मेदारी भी तुम्हें सम्हालनी होगी ,जगदीश।" जमुना जी मुस्करा कर कहे। जगदीश को काटो तो खून नहीं। पति–पत्नी स्तब्ध, इतनी बड़ी जिम्मेदारी पा. कर। "मुझ पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी ,विश्वास भी––––।"

जगदीश का गला भर गया था,। "तुम मेरे अपने हो ,सहोदर हो ,तुम पर विश्वास नहीं करूंगा तो किस पर करूंगा। जब मन में स्वा. र्थपना ,लाभ–लोभ नहीं रहता है ,दिल साफ रहता है ,तभी रिश्तों का मूल्य है। देखो ,जगदीश अब बच्चों की दुनिया ,जिम्मेदारियां अलग है। वे स्वयं व्यस्त और हलकान रहते है । हमें कितना साथ , सहयोग देगा। अब हम लोगो को स्वय अपनी जिम्मेदारी उठानी हेागी। हमलोग बुढ़ापा में जितना साथ–सहयोग से रहेंगे हमलोग उतना ही खुश , खुशहाल और सुरक्षित रहेंगे। कल से दुकान पर आ जाना।"जमुना जी कहे और पत्नी के साथ चले गये।

जगदीश और इन्दु सोच में डुब गये थे।आज चचेरा ,फुफेरा ,ममेरा को तो छोड़ दे, सहोदर भाई भी सत्ता,संपत्ति ,शक्ति के लिये एक दूसरे के खून के प्यासे है। जबकि दुःख–विपति में भाई ढाल और तलवार, तूफान में पतवार होताहै पर आज स्वार्थ में कठार बन जाता है। भाई की उपकारिता तथा सहयोगिता से अभीभूत हो गाये थे , जगदीश जी। मानो राम और सीता जैसे भाई–भाभी अभी भी धरती पर है ।

लघुकथा

पूनम झा 'प्रथमा'

जयपुर, राजस्थान

आलोचक का दर्द

"महफिल की जान कहाने वाले दिखाई नहीं दे रहे हैं ?"

"हाँ सुना है उनके सिर में दर्द है।"

"ओह! बहुत हँसाते हैं। बहुत अच्छे आलोचक हैं।"

"हाँ ये तो है। लेकिन पिछले सम्मेलन में उनकी आलोचना हो रही थी।"

"आलोचक की आलोचना ?" अंदर से आवाज आई 'तभी तो ...'

लघुकथा

शोभा गोयल
सांगानेर जयपुर

शिकायते अच्छी है

आज दोपहर खाली थी। घर के सारे काम निपट गये। परिवार के सदस्य खाना खाकर अपने अपने कामों में व्यस्त हो गये थे। मैंने मोबाइल उठा लिया। थोडी देर तक सोशल मीडिया पर टहलती रही। वहां से बोर हुई तो पापा को वीडियो कॉल लगा दिया।

पापा ने अभी अभी स्मार्ट फोन चलाना सीखा है। उन्हें ज्यादा कुछ नहीं आता मगर वीडियो कॉल उठा लेते है। सही से कैमरा नहीं रखने के कारण मुझे उनका चेहरा दिखाई नहीं दे रहा था। केवल छत का चलता हुआ पंखा दिख रहा था।

"पापा!! कैमरा ठीक से रखो ताकि आप दिखाई दे सकों।"
"मुझसे नहीं हो रहा बिटिया।"
"मैने सिखाया तो था आपको।"
जैसे तैसे पापा ने कैमरा ठीक किया। उनको देखकर मन को सुकून मिला। अब ठीक है कम से कम अब बात करने में मजा आयेगा।
‘ ‘ आज तु ऑफिस नहीं गई?‘‘-पापा
‘ ‘ छुट्टी थी पापा‘‘
‘ ‘ तभी तुझे अपने पापा की याद आ गयी।‘
"कैसी बातें करते हो आप, मेरे पापा हो आपको कैसे भूल सकती हूं।"
"मै तेरी व्यस्तता सब समझता हूं मेरी बिटिया..."
"फिर शिकायत क्यों?"
"पहले तेरी मम्मी से शिकायते करता था अब वो नही है तो खुद से कर लेता हूं आज तु दिख गई तो तुझसे कर ली।"
"जरूरी है क्या शिकायत करना।"
"शिकायतों का भी अपना आनन्द है।"
"वो कैसे पापा?"

"शिकायत न हो जिंदगी बेमजा होती है। यूं समझ ले तु किसी लम्बी यात्रा पर जा रही है। सड़क एकदम सपाट है इसमें न गड्ढा नजर आया न कोई मोड, न ही कही किसी ने तुम्हारी गाड़ी का शीशा खटखटाया और न ही किसी ने खाने-पीने की चीजें खरीदने की जिद की हो। पूरी यात्रा सुनसान हो तो.... तो क्या तुम्हे उस यात्रा का कोई आनन्द आयेगा।"
"यह कैसा सफर पापा, बिल्कुल नीरस सा...बस चलते जाना है क्या? सफर में जब तक कुछ आवाजें सुनाई न दे या फिर एक दो झटके न लगे तब तक सफर में कैसा मजा..."

"ठीक इसी तरह जीवन यात्रा में सब लोग एक-दूसरे से बिना कहे सुने मिलते रहेंगे, एक दूसरे का ध्यान रखेगे बात करते रहेंगे तो जीवन नीरस हो जायेगा। जीवन को रोचक बनाने के लिए कभी कभी शिकायत करते रहना चाहिए। जिससे संवाद बचे रहें। आदान प्रदान बचा रहे और बची रहे एक दुसरे की अहमियत, समझी प्यारी बिटिया०००"

"हां पापा, जिन्दगी का यह फलसफा मेरी समझ में आ गया। अब मै भी शिकायत किया करूंगी।
याद रखना शिकायतों का मांग नहीं बनने देना है बस रिश्तों को जिंदा रखने के लिए शिकायत करते रहना चाहिए।

लघुकथा

संजय मृदुल
खमार डीह, रायपुर

होली के रंग निराले

स्वर्णा की यह कॉलोनी में पहली होली है, उसके पति मानव बैंक में जॉब करते हैं छोटे से कस्बे में रहने वाले मानव की पोस्टिंग प्रमोशन के साथ बैंक के क्षेत्रीय कार्यालय में हो गयी तो घर परिवार छोड़ कर स्वर्णा को भी साथ आना पड़ा। सालों तक ससुराल में बिना पति के रहने के बाद साथ रहने का सुख मिला था उपर से पहली होली जिसमे वो अकेले साथ रहने वाले थे। जहां सास ससुर का कोई बंधन नही। ससुराल का कोई नियम कायदा नही। उसके पांव जमीन पर नही पड़ रहे थे मारे खुशी के। आज होली जलनी है, कॉलोनी में ज्यादा परिचय तो नही हुआ है मगर बच्चे होलिका दहन की तैयारी करते दिखाई दे रहे हैं। रात में सब के साथ मिलकर होली जलाएंगे ये सोच वह मन ही मन खुश रही है। जैसे ससुराल में घर के पास चौराहे पर सब इकट्ठा होते, फाग गाई जाती, विधि विधान से पूजा कर फिर होली जलाते और ढेर सारा गुलाल हवा में बिखर जाता। बड़ो के पैर छूकर आशीर्वाद लेना, छोटो को आशीष देना कितना अच्छा लगता था वहां
उसे रात का बेसब्री से इंतजार था। होली पर बस एक दिन की छुट्टी है इसलिए घर जाना नही हो पायेगा ये सोच मानव थोड़ा उदास था, पहली बार होली बिना परिवार के होगी। मगर स्वर्णा की खुशी देखकर उसे अच्छा लग रहा था। शाम ढलने लगी है चारो तरफ सन्नाटा छाया हुआ है। ससुराल में तो दोपहर बाद से मार्केट बन्द हो जाते थे। कानफोड़ू गानों की आवाज गूंजने लगती थी, होली है कि हुंकार, और होली के पकवानों की खुशबू से मुंह मे पानी आने लगता।यहां तो कोई हलचल नही। जाने कैसे मनाते होंगे होली?स्वर्णा सोच रही थी।

आठ बजे तो उसने होली का थाल सजाया, बच्चे बता गए थे 8 बजे होलिका दहन होगा। दोनो चौक पर पहुंचे तो देखा गिने चुने लोग इकट्ठा हैं। वो भी ग्रुप बनाकर बातें कर रहे हैं। कुछ मोबाइल से फोटो वीडियो बनाने में मग्न है। स्वर्णा ने होली की पूजा की और आकर मानव के पास खड़ी हो गयी। किसी की कोई प्रतिक्रिया नही। कोई हेलो हाय नही। सब अपने में मगन। भले ज्यादा समय नही हुआ कॉलोनी में आये ऐसा भी नही की फॉर्मल परिचय नही है। एक बुजुर्ग ने होली दहन किया, स्वर्णा ने उन्हें टीका लगाकर पैर छुए तो वो ठिठक से गए। फिर हंसकर बोले खुश रहो बेटी, नए आये हो लगता है यहां। जी कुछ समय हुआ है स्वर्णा ने जवाब दिया।

सब औपचारिक सा चलता रहा। लोग एक दूसरे को टीका लगाकर बधाई देते रहे, बच्चे फिर से सेल्फी लेने में लग गए। महिलाएं बतियाने लगी आपस में और पुरुष प्लान करने लगे कि किसके यहां बैठकर पीने की महफ़िल जमाई जाए।
मानव और स्वर्णा सबसे मिले टीका लगाया और फिर खड़े हो गए। स्वर्णा ने कहा चलो जी यहां रुकने से कोई फायदा नही। वो निकलने लगे तो किसी ने पूछा भी नही।
होली की सुबह से दोनो होली के लिये तैयार होकर बैठ गए। दस बज गए कोई हलचल नही। बच्चो की थोड़ी बहुत आवाज आ जाती थी कुछ कुछ देर बाद। मानव बोले मैं बाहर देख कर आता हूँ शायद कहीं इकट्ठा हुए हों सब।
पूरी कॉलोनी का एक चक्कर मार कर वापस आ गए सूखे के सूखे। जो बच्चे मिले वो इस डर में रंग नही डाले की नए हैं क्या पता बुरा मान जाएं अंकल।

सुनो, इधर आओ। स्वर्णा को पुकारा मानव ने। जैसे ही वो पास आई हाथों में भरा गुलाल उसके गालों में लगाकर मानव ने कहा, छोड़ो सबको। हम दोनों हैं न फिर किसी की क्या जरूरत, चलो आंगन में जम कर रंग खेलेंगे। ये शहर है यहां के लोग होली को गंवारों का त्योहार मानते हैं। शायद ये अपनी जड़ से उखड़ चुके हैं।
यहां के लोग क्या जाने पारम्परिक त्योहारों की मिठास उसका मजा। हम ऐसे न हो जाएं इसलिये चलो दोनो मिलकर होली खेलें।

म्यूजिक सिस्टम पर होली के गीत लगाए और दोनो शुरू हो गए होली का आनंद लेने को।

वेदवंती 'वेदी'

रांची (झारखंड)

रंग जाएं हम

अबकी होली इक दूजे के रंग में रंग जायें हम।
जीवन भर रंगा रहे मन, यूं रंगों में नहायें हम।।

साजन इस बार तुम्हारे साथ खेलेंगे हम होली।
चेहरे में मलेंगे रंग,छोड़ेंगे पिचकारी से गोली।
हम रंगीं गुलालों से रंग डालेंगे तेरे बालों को।
नीले,पीले,हरे और लाल करेंगे तेरे गालों को।
पहचाने ना इक दूजे को रंग ऐसे लगायें हम।।
अबकी होली इक दूजे के रंग में रंग जाएं हम।
जीवन भर.....

होली की मस्ती में हम दोनों ऐसे खो जायेंगे।
दिल से सभी शिकवे-गिले को हम धो जायेंगे।
फिर प्यार का रंग चढ़ेगा तो उतर न पायेगा।
जाएगी मेरी नजर जहां तू नज़र में आयेगा।
इक साथ एक सपना चलो आंखों में सजायें हम।।
अबकी होली इक दूजे के रंग में रंग जाएं हम।
जीवन भर.....

हम मिलकर गुझिया और कई पकवान बनायेंगे।
खुद खाएंगे और मेहमानों को भी खिलाएंगे।
आ जाए यदि हमारे घर भी हुड़दंगों की टोली।
रंग बरसेगा इक दूजे पे,होगी खूब हंसी ठिठोली।
आओ कुछ इसी तरह पहली होली मनायें हम।।
अबकी होली इक दूजे के रंग में रंग जाएं हम।
जीवन भर.....

रितु वर्मा

नई दिल्ली

जीवन

जीवन का बस सार यही है,
जहाँ लगाकर आस को रखा
वही निराशा हाथ लगी..
जहाँ नहीं रखा कोई उम्मीद
वहाँ से ही एक उम्मीद मिली,
ढूंढ रहे थे राह मंजिल कि
पर मंजिल तो दूर द्वार खड़ी,
और लगा कि जब जैसे पास है
मंजिल का रास्ता तो वैसै
वो भ्रमित राह के पास मिली,
गलतफहमी में हम जी रहे थे
मिल जाएगा शायद किसी दिन किनारा
इसी उम्मीद में राह चली,
चलते-चलते मैं भूल गई थी
डगर इतना आसान नहीं,
विपदाओ से घिरा है रास्ता
मंजिल यूँही इतनी पास नहीं...
मिलेंगे राह मे विचलित करने वाले रास्ते
पर मन को स्थिर करते जाना है,
अच्छा लगे या बुरा मन को
ठहराव फिर भी लाना है,
मिले नहीं जब अतिम पड़ाव शिखर का
बस सीख लेते जाना है..
जो ग़लतियां हुई जीवन में पुनः नहीं दुहराना है।

सारिका भूषण की कविताएं

राँची, झारखंड

बदलता मौसम

हाँ!
मौसम तो खूब बदला करते हैं

बदलते मौसम के साथ
पत्तों के रंग
फूलों की किस्में
गगन की रंगत भी बदलती हैं

बस इस बदलाव में
ठहर जाना तुम
मुट्ठी भर प्रेम
और सच्चाई के साथ।

खुशबू अपने देश की

माटी की ख़ुशबू
भरी थी हवाओं में
एक अरसे बाद पड़ा
जब अपने देश में पाँव

रिश्तों की गमक से
चहक उठा मन मेरा
हर मोड़ और गलियारा
लगने लगा था अपना ही गाँव

उजालों से डर

डगमगा जाती है जब ईमानदारी
बढ़ जाता है
जीवन में अंधेरों का ख़ौफ़
और तब डरने लगता है
लालची मन उजालों से।

नौटंकी

वह
बैठे-बैठे रोने लगती है
हँस पड़ती है दुनिया
बोलती कैसी यह नौटंकी
सोचती है
छोड़ देगी नाटक की डोर जिस दिन वह
बिखर जाएगी दुनिया
और सचमुच होने लगेगी नौटंकी घर-घर में
।

पुरुष और पहाड़

पहाड़ों पर जाना
उसे अच्छा लगता है
बड़ी समानता है दोनों में
दोनों के आँसू अंदर ही रहते हैं
पाषाण हृदय में भी रहता है जीवन
पनपते हैं जीव
बहती है नदियों सी रसधाराएँ
और कभी-कभार फूट पड़ती है सहनशक्ति
ज्वालामुखी बनकर।

मेरी डायरियों में ...

सिर्फ कविताएँ नहीं हैं
मेरी डायरियों में
झाँकता है मेरा अतीत
पाबंदियों के मोटे-मोटे पर्दों के पीछे से
किसी पनबट्टा में कैद दिखेगी
मेरे छोटे-छोटे सपनों की गिलौरियाँ
चटख रंग और बड़ा स्वाद है उनमें
बस थोड़ा मुरझा गईं हैं
पर रखा है सम्भाल कर मैंने उन्हें
क्योंकि वे हैं
तो बरकरार है
मेरी ऊर्जा
सपने देखने की चाहत
और टूटने पर भी जुड़ने की कला।

चिंता

ज्यों-क्यों बूढ़े हो रहे माँ-बाप
गीली मिट्टी से हो रहे
खो गई है उनकी सख्ती
उनकी नरमाहट बेचैन करती है
कहीं वे
अपने ही वृक्ष पर
लत्तरों की भाँति तो नहीं रह रहे।

आज भी

समाज की तमाम वर्दियों के साथ
खड़ी है आज भी
वह कठघरे के पीछे
वकील और जज दोनों के प्रश्न चुभते हैं
क्योंकि घर की चौखटों को
आज भी पच नहीं रहा उनका लांघे
जाना।

बराबर

हँस रहे हैं
समाज और वकील
तलाक की अर्ज़ी डाले
सत्तर साल की वृद्धा का इनकार सुनकर
इंसाफ का तराज़ू लिए
सोचता है जज
आखिर क्या कभी होंगे बराबर

कवियत्री महिला काव्य मंच (अंतरराष्ट्रीय रजिस्टर्ड साहित्यिक संस्था) की राष्ट्रीय अध्यक्ष है और विभिन्न विधाओं (कविता, लघुकथा, कहानी, यात्रा-संस्मरण, हाइकु, बाल कहानी आदि) में 60 से ज़्यादा साझा पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

डॉ मीरा सिंह "मीरा"

डुमराँव, जिला -बक्सर, बिहार

गाना मुश्किल

जीवन राग तराना मुश्किल
हर पल हंसना गाना मुश्किल।

अपना पता बताना मुश्किल
एक जगह टिक पाना मुश्किल।

दिनभर रहते दौड़े -भागें
खुद से भी मिल पाना मुश्किल।

कुछ ऐसे हालात बने हैं
करना एक बहाना मुश्किल।

अर्जुन वाला तीर कहां है
साधे लक्ष्य निशाना मुश्किल।

कितनी दूर निकल आए हैं
है वापस मुड़ पाना मुश्किल।

लगे चीखने पाँव हमारे
मंजिल तक है जाना मुश्किल।

जाने कितने रिश्ते- नाते
सबका साथ निभाना मुश्किल

याद अभी तक "मीरा" मुझको
गुजरा एक जमाना मुश्किल।।

ये मौसम बड़ा सुहाना है

कोयल कूक रही बागों में
होठों पर नया तराना है।
झूम- झूम मन मेरा गाए
ये मौसम बड़ा सुहाना है।।

पीत वसन में धरती माता
लगती सुंदर कितनी प्यारी।
सरसों फूली खेत हमारे
आह सभी दृश्य मनोहारी।।
कुदरत लुटा रही है देखो
खुशियों का मुफ्त खजाना है।
झूम -झूम मन मेरा गाए
ये मौसम बड़ा सुहाना है।।

सोंधी-सोंधी पवन सुहानी
दामन लिपटी हंसकर बोली।
आया मौसम है अलबेला
आओ खेलें हम सब होली।।
गुनगुन करते भंवरें गाए
आया मौसम मस्ताना है।
झूम -झूम मन मेरा गाए
ये मौसम बड़ा सुहाना है।।

गेहूँ बाली लगी झूमने
हुए मगन खुश भाई किसान।
मौसम आया बहुत सजीला
पंछी करें हैं कलरव गान।।
झूमें सारे लोग खुशी से
खुशियों का नहीं ठिकाना है।
झूम -झूम मन मेरा गाए
ये मौसम बड़ा सुहाना है।।

ऋतुराज पधारो

आओ जी ऋतुराज पधारो
मौसम के सरताज पधारो।

तुझसे मिलने को है आतुर
कुदरत के यह सभी नजारें।
महकी-महकी आज वादियाँ
सरसों फूली खेत हमारे।।
मृदुल हवाएँ गीत सुनाती
दिल देता आवाज पधारो।
आओ जी ऋतुराज पधारो
मौसम के सरताज पधारो।।

मन बासंती हुआ हमारा
मस्ती में झूमे जग सारा।
उत्सव का माहौल हुआ है
मौसम आया प्यारा प्यारा।।
तुमसे करती हूं हथजोड़ी
अवगुण मेरे सभी बिसारो।
आओ जी ऋतुराज पधारो
मौसम के सरताज पधारो।।

फूलों से ये लदी डालियाँ
स्वागत में सज शीश झुकायीं।
रंग-बिरंगी सभी तितलियाँ
कलियों को नवगीत सुनायीं।।
सुनो शीत की आज विदाई
आओ बसंत आज पधारो।
आओ जी ऋतुराज पधारो
मौसम के सरताज पधारो।।

प्रेरणा यादव

सेकंड ब्लॉक ,9 c, ड्रीम वैली ,सिलीगुड़ी

वह तुम्हें भूल जाएगा...

एक दिन वह तुम्हें भूल जाएगा,
यक़ीन करो,
ऐसा ही होता है,
बातें
आदतें,
मुस्कान,
प्रेम
यह देर तक याद नहीं रख पायेगा,
ऑफिस
घर - गाड़ी की किश्तों
प्रोजेक्ट
प्रमोशन्स
की दौड़ में
वह सब भूल जाएगा
जन्मदिनों को,
सालगिरह को,
उसे याद रहेंगी
परिवार को सुखी रखने वाली सारी युक्तियाँ,
अपने मन को, अपनी इच्छाओं को,
वह विस्मृत कर देगा,
वह प्रेम में डूबा प्रेमी भर नहीं रह पाएगा!
वह भूल जाएगा वह मनुष्य है मशीन नहीं.

मैं मेरे जिम्मे हूँ..

हर वह शय
जो पसंद नहीं
उसे नज़रअंदाज़
करती हूँ,
हर वह बात जो
दिल दुखाती हो,
भूल जाने का
अभिनय करती हूँ,
हर वह घटना
जो मुझे उदास करती है,
मैं उस तारीख,
उस दिन को मन की किताब से
हटा देती हूँ...
अब बस ख़ुद को और अपने आप को
ही जरूरी समझती हूँ,
मैं अपने जिम्मे हूँ,
मेरी जिम्मेदारी मेरी भी मेरी है
यह अब समझती हूँ!

पागल मन..

अंतर्ज्ञान है उसे,
कहाँ उबरेगा पता है उसे,
कहा डूबेगा वह जानता है
कौन - सा प्रवाह
कौन - सा भंवर
सब वहा कर ले जाएगा
वह समझता है,
हाँ, मन, सारे अंदेशें समझता है!
गलतियाँ करने का अधिकार है ,
दिया है उसने,
हार जाने का
ग़म होता है उसे कभी - कभी
अवसाद की आँधी दस्तक देती है,
वह सुनता है मगर किवाड़ खोलता नहीं,
जाने क्यूँ ठीक उसी समय याद आती है उसे,
वह लम्बी यात्रा जो तय की है,
पुन: स्थगित करता है वह दुःखी होना..
नए सिरे से एक नई ऊर्जा
संघर्ष को ही साथी बनाता
कभी किस्मत से पंगा लेता है
कभी नियति को नकारता है
फिर से पागलपन करता है
पागल मन....

डॉ. शबनम आलम

अलीगढ़, उत्तर प्रदेश

बाती

अंधेरे घर को
रौशन करने के लिए
मैं हर शाम दीया जलाती रही
ताकि रौशन कर सकूं
इन घर में रहने वाले दिलों को
और देख सकूं
उन दिलों में अपनी जगह
जब उन दिलों के अंदर झांका
खुद का वजूद
जलती बाती पाया मैंने
जो खुद जलकर भी
घरों को रौशन करती है
और एक दिन पूरी तरह जलकर
अपना वजूद खो देती है...
फिर अगले दिन हीं
उसकी जगह
नई बाती जलने लगती है
और घर फिर से रौशन हो जाता है!

मुखौटे

देखो न! आजकल बाज़ार में
कितने सुंदर, रंग-बिरंगे
मुखौटे बिक रहें हैं
जो बड़े ही सस्ते हैं, इसलिए
सभी खरीद लाते हैं और
अपने-अपने मतलब के अनुरूप उसमें
फिट हो जातें हैं आसानी से
कोई-कोई तो एक ही चेहरे पर
कई-कई मुखौटे लगाए फिरते हैं
कौन सच्चा है और कौन झूठा
पहचानना हो गया है मुश्किल, इसलिए
इस दौर में सच्चा व्यक्ति मारा जा रहा है और
झूठा व्यक्ति सच्चा बनकर राज कर रहा है
पर, विडंबना यह है कि
जो मारा जा रहा है
क्या वो भी सच्चा था
या वो भी पहन रखा था
कोई मुखौटा?

मुहब्बत कभी बूढ़ी नहीं होती

मुहब्बत कभी बूढ़ी नहीं होती
बल्कि वक्त के साथ-साथ
और भी जवां हो जाती है
जैसे सोना आग में तपने के बाद
चमकदार, मजबूत और सुंदर
रूप ग्रहण कर लेता है
ठीक उसी तरह मुहब्बत को
जवानी के दिनों में
सम्पूर्ण आजमाइशों से
गुजरना पड़ता है और
इन आजमाइशों से गुजर जाने के बाद
मुहब्बत और भी मजबूत,
सुंदर और जवां हो जाती है
क्योंकि एक उम्र बढ़ने के बाद
एक दूसरे के लिए सिर्फ मुहब्बत होती हैं
जिम्मेदारियों से मुक्त
निश्छल, पाक और शांत
बिल्कुल दरिया के पानी की तरह
और दोनों एक-दूसरे का हाथ थामे
दरिया में डुबकी लगा
बहुत दूर निकल जातें हैं
दूर बहुत दूर, जहां से
मुहब्बत के बिछड़ने का भी वक्त आता है
और वहां ये मुहब्बतें वादा करतीं हैं,
मिलेंगे जन्नत में
पाक और जवां मुहब्बत के साथ
सदा-सदा के लिए

बंधन

बंधन
किसी के लिए
रिश्तों को प्यार से
जोड़े रखने का सबब होता है
तो किसी के लिए
रिश्तों में बांधें रखने की बंदिशें
बंधन तो बंधन है
बस समझ-समझ का फेर है

मनोज जैन

संपादक वागर्थ
(सोशल मीडिया का चर्चित समूह)
भोपाल मध्यप्रदेश

भेद भाव को

भेद भाव को,
मारें गोली।
हैप्पी होली,
हैप्पी होली।

मौसम ने मिश्री सी घोली।
वासन्ती ऋतु इत उत डोली।
फगुआरों की झूमें टोली।
आओ मिल हम खेलें होली।
तुम ही हो मेरी रांगोली।

रोविन आया
सुनो रमोली
हैप्पी होली
हैप्पी होली

सूरत न्यारी सीरत भोली।
बोलो जी मेरे हमजोली।
चूनर रँग दूँ, रँग दूँ चोली।
मिलजुल खाएँ पूरन पोली।
रस से भीनी प्यारी बोली।

रंग गुलाल
लगाओ रोली
हैप्पी होली
हैप्पी होली

ढोल बजा रे ! जमकर ढोली।
इधर हँसी है, उधर ठिठोली।
लज्जा ने हँस साँकल खोली।
प्रीत उड़ेलें भर भर झोली।
मैं पी के रँग अंग भिंजोली।

मन की चिंता
रँग से धो ली
हैप्पी होली
हैप्पी होली

रंजना फतेपुरकर

उत्कर्ष विहार,इंदौर

महकी फागुनी हवा

कान्हा!
महकी महकी फागुनी
हवा में इठलाता हर रंग
छलक रहा है
पलाश की रतनारी कलियों से
झर झर सिंदूर बरस रहा है
खिली खिली गुलाब पंखुरियों
से देखो गुलाल बरस रहा है
अम्बर भी सांझ की लाली
धरती के गालों पर
मल रहा है
मोरपंखों के सात रंगों से
सूरज भी होली खेल रहा है
कान्हा!
आओ हम तुम भी खेलें
वहीं होली
इन्द्रधनुष का हर रंग
जहां छलक रहा है

माधवी त्रिपाठी
प्रयागराज उत्तर प्रदेश

कालचक्र

भावनाओं के धुंधले पड़ते ही
अधर मौन हो जाते हैं
प्राण रहित देह भी
निष्प्राण की ओर चले जाते हैं

हैं नहीं कोई विरुद्ध ना ही कोई हैं सगा
जिसका जितना काम यहां उतना उसका दाम यहां
जितनी जिसकी अपेक्षाएं उतना उसका तिरस्कार यहां
जितनी रही निश्छल भावनाएं सब यहां छली गई

कलुषित मन विच्छेदित हृदय
असाध्य हुई मेरी साधना
वंचित रहा जो प्रेम से
बस हृदय वही शेष रहा

विमुख हुआ जीवन यहां विमुख हुई समस्त इच्छाएं
कुचक्रों के रण में खड़ा मैं असहाय अभिमन्यु जैसा
भेदना है जीतना है इन चक्रव्यूह रचनाकारों से
फिर निखरना और सवरना है सूर्य जितना तेज होकर

चलो छोड़ो जाने भी दो
मेरी पीड़ा मेरी रही
है नहीं तुममें ये साहस
जो सुन सको मेरा कहा

हूं नहीं मैं तनिक भी कायर ना ही कायरता परिचय मेरा
संदेहास्पद नहीं तनिक भी ना ही हारा है जीवन मेरा
कालचक्र का काल प्रभाव टल ही जाएगा एक दिन
फिर लिखूंगा संदेश अपना फिर होगा अंत मेरा

प्रोमिला भारद्वाज,
शिमला (हि प्र)

सुहानी ऋतु

मनमोहिनी सुहानी ऋतु आई,
देख धरा मन्द-मन्द मुस्काई।

प्रकृति ने नव परिधान पहने
रंग बिरंगे फूलों के विरले गहने,
मोती माणिक हीरों से अधिक सुन्दर,
निहार रहे स्नेह से सब निरन्तर,
पुष्पों जड़ी हरी ओढ़नी के क्या कहने,
पुनः पुनः आएँ, असमंजस से देखने,
सौंदर्यपान कर सब पर मदहोशी छाई।

शीत लहर न लू का कहर
शीतल- शीतल बहे ब्यार,
पेड़-पौधे, वन-उपवन, लताएँ,
मदमस्त हौले-हौले लहराएँ,
पँछी मधुर-मधुर गीत गाएँ
तितलियाँ चहकें, भँवरे गुनगुनाएँ,
सकल सृष्टि है ऐसे हर्षाई।

मयूरों का निराला नृत्य लुभाए,
चहचहाते खगों की उड़ान नयनों को भाए,
झूम-झूम नर्तन करती लताएँ,
देख-देख हम क्यूँ न गाएँ,
अम्बर अवलोकन कर खुशी के अश्रु बहाए,
निखर-निखर जाएँ जड़ चेतन, ऐसे नहलाए,
चहुँ ओर प्रसन्नता की लहर बहाई।

मीनाक्षी शुक्ला
नई दिल्ली

ईश्वर से बोलती बतियाती कविताएँ

क़िताब का शीर्षक विचारोत्तेजक है। हो भी क्यों नहीं... हमनें ईश्वर के लिए ऐसा कभी सोचा ही नहीं या फिर सीमित शब्द ही हमारे शब्दकोश में रहे।

कविता सिंह की पहली कविता संग्रह 'ईश्वर म्लेच्छ है' को ईश्वर के ही समदृश्य लिखा गया है या यूँ कहें कि अधिकांश रचनाएं ईश्वर के ही सदृश्य लिखी गई है, तो सही रहेगा।

यूँ तो, म्लेच्छ का शाब्दिक अर्थ ढूंढने जायेंगे तो बहुत सारे मिलेंगे। लेकिन, जिस विचार और आधार के साथ लिखा गया है वहाँ ईश्वर लेखिका के जैसा ही है म्लेच्छ! जब मन किया खाया, नहाया या यूँ ही पड़ा रहा म्लेच्छ की तरह।

आमतौर पर गाँव घरों में ऐसे ही तो बोला जाता है। चूंकि, लिखने के पीछे मंशा इतनी भर थी कि विवादित शीर्षक को आप किस तरह से देखते हैं तो स्पष्ट तौर पर कहूँ तो इनमें लिखी कविताएं जब आप पढ़ते हैं तब ही शीर्षक के मायने समझ सकते हैं।

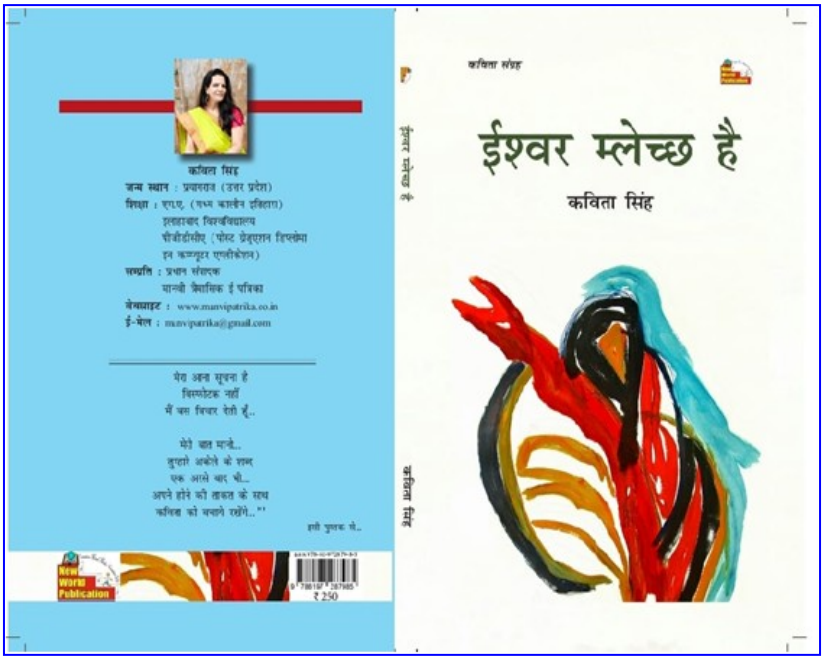

पहले खंड 'ईश्वर' से ली गई कविता का शीर्षक 'ईश्वर म्लेच्छ है ' को सार्थक करता है। कविता है___

"दीवाली के दूसरे दिन -
नदी पार जंगल में
अपनी छोटी सी मड़िया में सुकून से
देर तक सोता पड़ा रहा ईश्वर
मेरी तरह...
उसने-
देर से उठकर दतौन किया
दिनभर मक्खियां मारी
तीस बार उठा और तीस बार बैठा,
बसियौटी पूड़ी - सब्जी चापकर
फिर से सो गया म्लेच्छ
मेरी तरह... "

इसमें रचित कविताएं आम लोग हैं, हमारे-उनके जैसे! यहाँ ईश्वर टहलता, घूमता और खीर में मिठास कम होने पर पूरा दिन चिक-चिक करता है, फ़िर एक कटोरी खीर को चाट चाटकर खाता है। ईश्वर को मुश्किल से यक़ीन होता है कि वो अदेह है। माँ कई तरीके से यह भी बताती है कि ईश्वर सभ्य है।

दूसरे खंड 'चीजें' में लिखी गई रचनाएं बेहद मामूली समझी जाने वाली चीजों पर ही है। आमतौर पर हम कहाँ इस तरह से पढ़ते या लिखते हैं ;अमकटना, गमछा, हल्दी, सूपड़ा, फावड़ा, कटोरा... ? अब एक छोटी रचना है **हल्दी!**

"कोई सीमा नहीं हल्दी की
खेत ने देखा कहा गांठ है
बच्चे ने कहा रंग
औरत ने कहा मसाला है
पिता ने कहा बेटी का हाथ...!"

तीसरे खंड 'प्रकृति' में लिखी गई रचनाएं प्रकृति के प्रति प्रेम को तो दर्शाती ही है, लेकिन तरीका बहुत अलग! यहाँ प्रकृतिप्रदत्त उन चीज़ों के प्रति कृतज्ञता का भाव भी हैं और चिंता भी! रचनाओं में स्वत: ही पीड़ा का भाव दिखता है। जब कविताएं बात करती है कि देखो पृथ्वी कठुआ गई है, पानी शब्द हुए और मछली चुल्लूभर शब्द में तपड़ रही है। कीड़े के पक्ष में लगातार ईश्वर से जिरह जारी है। जंगल की देह थर्रा गई है बुलडोजर के डर से। ये जंगल तेजी से खाली हो रहे... जबड़ों की भाषा, बोरे में बसंत ऐसी रचनाएं जो सोचने को मजबूर करती है।

चौथा खंड 'विस्फोट' वाकई विस्फोटक है। लेखिका स्वयं को चुप्पा विद्रोही मानती है। यहां की कविताओं में शांत सा आक्रोश परिलक्षित होता है। बेख्याली से रोजमर्रा के जीवन में बजबजाती औरतें अपने-अपने घरों में भन्नाई सन्‌४७ के आजादी का स्वाद ढूंढ़ती है, जो आज भी नदारद है। इहलोक से परलोक का जाने के लिए बिना परिचय पत्र के यात्रा का सोचती है, अंतिम प्रेम कविता मृत्यु लिखना चाहती है। पहले वर्णमाला जन्मदात्री से सीखती है, जो अलग है। अब देखती है तो हां! बच्चे पृथ्वी की त्रिज्या भी नाप लेते हैं। यहां देश, शहर, चुनाव सब मिलते हैं। रेगमाल से खुरदुरे हाथ मिलते हैं और उनके लौटने से कविता हरी-भरी भी हो जाती है। लिखती है कि,

"मेरा आना सूचना है
विस्फोट नहीं
मैं बस विचार देती हूं..."

पाँचवा व अंतिम खंड 'स्त्री' को समर्पित है। यहाँ गोदना के बहाने माँ जीवित है। यहाँ तांबई देह वाली स्त्री भी है। लोक परंपराओं को जीवित रखने वाली बेलों को लिखा गया है। शारदा सिन्हा, जिनका हाल ही में निधन हुआ है, उनको श्रद्धांजलि दी गई है। व्रत उपवास और ईश्वर को जोड़े रखने वाली गँवई औरतें भी हैं। एक रचना जो बहुत सुंदर लगी __

" मैं एक स्त्री को जानता हूं
जिसने कभी कोई कविता नहीं लिखी
सिर्फ़ रोटियां सेंकी
कब से, कितने वर्षों से मैं नहीं जानती
शायद मेरे जन्म से पहले से
उसने __
कितने अरब खरब गेहूँ के दानों की
रोटियां सेंक डाली - पता नहीं
कितनी आंच और कितनी अंजुरी पानी
मेरे पास कोई हिसाब नहीं
मैं सिर्फ़ इतना जानती हूं
मेरी माँ रोटियां सेंकती है
कविताएं नहीं लिखती
मैं कविताएं लिखती हूं
पर उतनी सुंदर नहीं
जितनी सुंदर उसकी रोटियां...!"

इसमें संग्रहित कविताएं बड़ी-बड़ी बातें नहीं करती। वरन, छोटी बातों में बड़ा खोज लाती है। कविताएं बात करती है - मटर के कीड़ों के बारे में, उन किसानों...के बारे में जिसे वो देवदूत कहती है, गोदना जो ओल्ड फैशन है, पतोरे के बारे में, पीपल, बांस, बरगद, शीशम के बारे में जहां सुहागनें समझती है कि ईश्वर है।

कुल पाँच खण्डों में लिखी गई 144 पृष्ठों में इक्यासी कविताएं अपने विभिन्न विषय को अलग ही दृष्टिकोण देती है। कविता बिंबात्मक है, छायावाद को प्रस्तुत करती है और अतुकान्त शैली में लिखी गई है। कुछेक रचनाओं को छोड़कर रचनाएं अधिक लम्बी नहीं है। शब्दों का चयन रचनाओं को निखार देता है। जैसे- रिकवच, गोदना, पटोला, थेथर, सुपड़ा, इनार, छतनार, कठुआ, टहटहा ऐसे कई शब्द मिलेंगे। इस संग्रह में ठेठ शब्दों का सुघड़ सुन्दर प्रयोग किया है लेखिका ने! रचनाओं में प्रयागराज के पाँव भी दिखते हैं और मुंबई की शाम भी तो गुजराती रस भी।

जहां इस तरह की किताबों के लिए एक निश्चित पाठक वर्ग होता है, वहीं दूसरी ओर एक बड़ा पाठक तबका अभी भी इस इंतज़ार में है कि कोई खींच कर बुलाये और थमा दे अलग स्वाद भी। जब तक चखेंगे नहीं स्वाद कैसे समझ आयेगा? कविताओं में आक्रोश, विद्रोह, चिंता दिखती है, परन्तु, हल नहीं! लेखिका का हृदय स्त्री के सुख-दुःख में अधिक उपलता है, यहाँ ईश्वर भी मौन गौण है।

New world publication से आई कविता संग्रह ईश्वर म्लेच्छ है, आपको आसानी से अमेजॉन मिल जायेगी। किताब की कीमत 250/ है। और, हां! इसका पृष्ठ आवरण सुंदर है, अपनी कविता की तरह ही ईश्वर से हठ कर उलझ बैठा है।

दमदार शीर्षक के साथ साहसिक कविताओं के लिए लेखिका 'कविता सिंह जी' को उनकी पहली किताब 'ईश्वर म्लेच्छ है' के लिए ढ़ेरों शुभकामनाएं!

"मैं ऐसी कविताएं लिखना चाहती हूं ,
जो पढ़ी जाए...
पृष्ठभूमि को उपजाऊ या बंजर बताना
आलोचकों का काम है
करने दो उन्हें
मिलते हैं इसके लिए उन्हें अच्छे पैसे...
तुम बस पढ़ो...!"

पुस्तक : ईश्वर म्लेच्छ है (काव्य संग्रह)

लेखिका : कविता सिंह

प्रकाशक : न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन ,नई दिल्ली

प्रथम संस्करण : 2025

पृष्ठ : 144 ,मूल्य: 250/-

डॉ.ज़ियाउर रहमान जाफ़री
ग्राम /पोस्ट -माफ़ी, वाया -अस्थावां,
ज़िला -नालंदा, बिहार 803107

बार -बार उग ही आएंगे :ज़िन्दगी के नए नज़रिये का गीत

हिंदी नवगीत में जो चंद नाम सबसे ज्यादा लोगों का ध्यान खींच रहा है,उनमें एक नाम गरिमा सक्सेना का भी है.बार -बार उग ही आएंगे उनका सधः प्रकाशित पचास गीतों का संग्रह है.किताब के नाम से ही ज़ाहिर है गरिमा तमाम अवरोधों के बावजूद भी उग आने का साहस रखती हैं . उनकी भाषा गीत के अनुकूल नर्म, सरस मुलायम और कोमल है. विषय ऐसे हैं जिससे हम सब का राब्ता पड़ता रहता है, इसलिए उनके गीतों को पढ़ते हुए अपनी ख़ुशी और ग़म दोनों का लगातार एहसास होता रहता है. संग्रह में उनका पहला गीत है उम्र के सोपान जिसमें एक बच्चे का क्रमिक विकास दिखाया गया है.उसकी तोतलाहट से एबीसी पढ़ते हुए छोटे-छोटे वाक्य बनाना.डगमगाते हुए चलना खिलकर हंसना यह सब इन गीतों में ऐसे पिरोया गया है कि इसकी शब्दवली अकस्मात हमें अपनी ओर खींच लेती है. फिर जैसे-जैसे हम उनके अन्य गीतों की तरह बढ़ते हैं उन गीतों से मुतासिर हुए बिना नहीं रह पाते. उनके गीत बादल होना में निराला के बादल राग की तरह गरजने बरसने वाली शैली नहीं है. यह वह बादल है जो बच्चों के साथ खेलता है, चलता -फिरता है और उसे कागज़ के नाव बनाने का अवसर देता है.यह बादल धरती की प्यास बुझाता है.गरिमा सक्सेना के अधिकांश गीतों में बच्चे हैं, बादल है,नदी है,हौसला है,चिड़िया है और जहां -तहां राग और विराग के बिंब भी हैं. इसलिए उनके गीतों के साथ श्रृंगार की मोहकता,और वात्सल्य रस की मधुरता भी मिल जाती है. इस संग्रह में बार-बार उठी आएंगे शीर्षक से भी एक गीत है जहां गरिमा कहती हैं -

हम पीपल हैं
वन तुलसी हैं
बार-बार उग ही आएंगे...

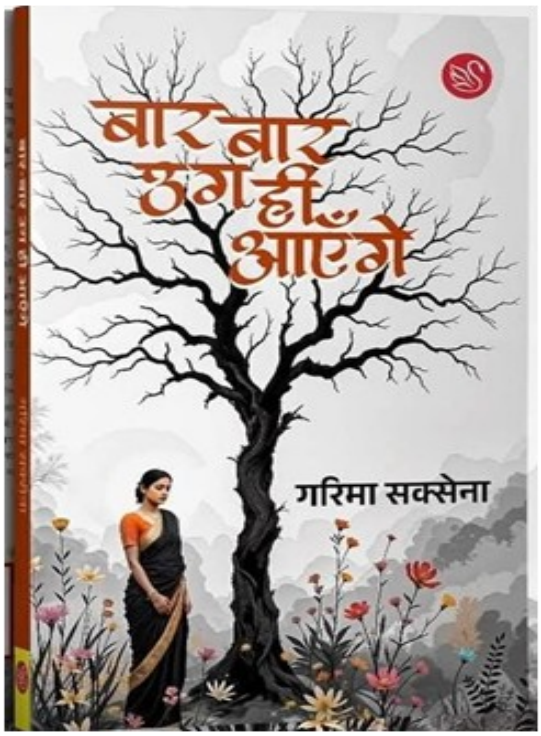

इस पूरे गीत में उगने की वजह भी रही है और वह श्रम शक्ति है. रचनाकार को विश्वास है कि मेहनत आदमी को उगने से रोक नहीं सकता इसलिए हौसला मत हार गीत में भी वह यह बात रिपीट करती हैं -

आज जो बट वृक्ष है
कल भी था वह
जो सतत संघर्ष करता
जीत जाता है

पेशे से बड़े शहर में इंजीनियर गरिमा सक्सेना ने कवयित्री बनने की वजह भी अपने गीतों में बयां किया है-

सम्मानों हित क़लम न थामी
सच की ख़ातिर नित्य लड़ी हूं

कहना ना होगा कि गीत एक ऐसी विधा है जो उल्लास और वेदना दोनों स्तरों पर निकल कर सामने आता है. गरिमा के भी गीत ऐसे हैं जो दिल से फूटकर बाहर निकलते हैं इसमें विषयगत ख़ुबसूरती भी है, सहजता, तरलता,सुबोधता अकृत्रिमता और लोकोन्मुख्ता भी अपनी जगह मौजूद है. इनमें वह तिलिस्म है जो पाठकों को एक बार बांध लेता है तो फिर उसे छोड़ नहीं पाता.

पुस्तक- बार-बार उग ही आएंगे
गीतकार-गरिमा सक्सेना
वर्ष 2025,मूल्य -299 पृष्ठ- 120
प्रकाशक- श्वेतवर्णा प्रकाशन नोएडा.

गोपेंद्र कुमार सिन्हा गौतम
gopendrakumarsinha@gmail.com

जनजातीय चेतना पर सवाल : कितने बदल गए आदिवासी

काव्य जगत के उदीयमान कवि हरिराम मीना साहित्य जगत में एक उभरता हुआ नाम है।जो बहुत ही बेबाकी से आदिवासी चेतना की हकीकत को पन्ने पर उतारकर लोगों के सामने सवाल करते हैं *"कितने बदल गए आदिवासी"*?

इस काव्य संकलन में प्रकाशित कविताएं हरिराम मीना की राजस्थानी संस्कृति-समाज,खेत- खलिहान, रेगिस्तान, खान-पान ,संस्कार, लोक-परंपरा, अतीत-वर्तमान, पेड़-बागान,मौसम-जलवायु, शिक्षा-दीक्षा,बेटा-बेटी जैसे जिंदगी के हरेक पहलुओं को छुती हुई नजर आती है।

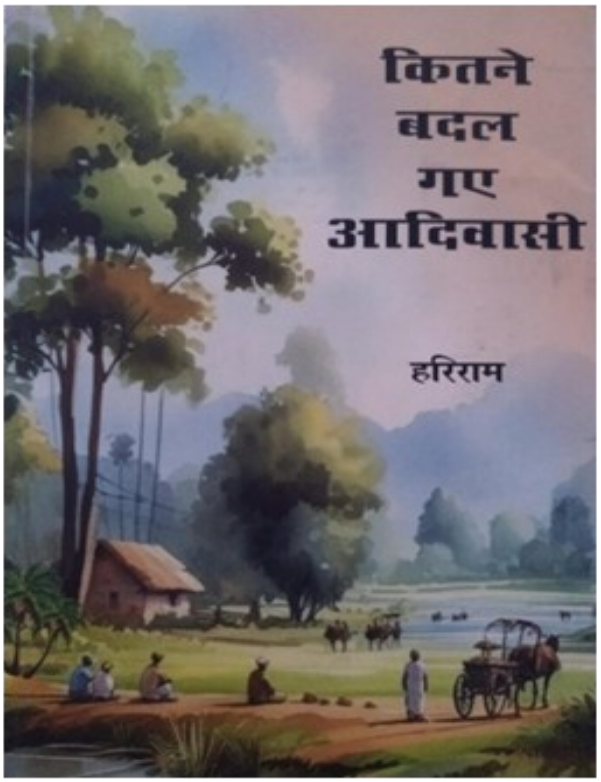

कवि ने अपनी कविताओं को बहुत ही सहजता से अपने आसपास से उठते हैं और बताते हैं कि इंसान को बस अपनी आंखें और दिल खोल कर रखना चाहिए उसे पूरी दुनिया अपने बाजू में नजर आएगी।

कवि ने इस पुस्तक के भूमिका में ही इंगित कर दिया है कि यह कृति मुख्य रूप से जनजातीय चेतना पर आधारित है जो आज के आधुनिक दौर में समाज में हो रहे परिवर्तन सादियों की सार्थक रीति-रिवाज और परंपरा समाज का सहज मार्गदर्शक होता है।कवि अपनी कविताओं के माध्यम से लोगों को आगाह करते हुए नजर आते हैं कि पढ़ो-लिखो आगे बढ़ो पर अपने जड़ से मत जुदा हो।अपनी रीति रिवाज परंपरा भाषा वेशभूषा औषधि ज्ञान परिवार समाज की जड़ से जुड़े रहना और नई पीढ़ी को भी पुरानी पीढ़ी के द्वारा सहजे गए लोक संस्कारों से अवगत कराना समाज की एक महत्वपूर्ण जिम्मेवारी है।

"कितने बदल गए आदिवासी" हरिराम मीना की कुल 82 चयनित कविताओं का सुंदर गुलदस्ता है। जिसमें राज्य-समाज के लोक परंपरा रीति रिवाज पर आधारित कविताओं को चुन-चुन कर पिरोया गया है। इस काव्य संग्रह की पहली रचना 'प्यार की पींगे बढ़कर चली थी' लड़कियों को आगे करती है कि प्यार के रास्ते बहुत पथरीले होते हैं जिससे होकर गुजरने से हमेशा हरी भरी वादियां नजर नहीं आती कभी-कभी जंगली जानवरों के शिकार भी होना पड़ता है। इसलिए सावधानी बरतने की जरूरत है। दूसरी कविता 'पुरातन दौर में दबाकर' नई पीढ़ी के लोगों को चेतती है कि किस तरह से कुछ लोगों ने मूलनिवासियों को शिक्षा से दूर रखकर उन्हें अमानवीय अवस्था में धकेल कर कुछ लोग जल जंगल और जमीन पर अधिकार करने में मशहूल थे। साथ ही कोई चुनौती भविष्य में ना मिले इसलिए मूल निवासियों को जाति धर्म में बांटकर निश्चित हो गए। खुद के लिए दान और दूसरों के के नाम मदिरा और अनुष्ठान कर गए।

वैसे तो इस काव्य संग्रह में शामिल सभी रचनाएं अपनी लोक धार्मिकता से जुड़ी हुई हैं। जो आपसे संवाद करती हुई नजर आती हैं। पर कुछ रचनाएं आपको बार-बार पढ़ने और सोचने को विवश कर देंगी। जैसे मुझे देखती नजरे तो, छीन लिया राज-पाठ, रेगिस्तान का जहाज, नन्ही परी, रबड़ी का स्वाद, कटते जंगल, करते दिखावा देखो, सदियों से खून से सींचकर, हिमगिरी सा विचाल हृदय लिए, लोक लाज तजकर,बाबा साहब भीमराव अंबेडकर का आह्वान, क्या असली भारत रोड के उस पार है, रबी की फसल, बेटी की पढ़ाई, यह सब बेईमानी से कमाया है, देश को हम संविधान से चलाएंगे, जंगल की घाटी में, अपने ही मूतन को, राणा पुंजा भील,

, श्रम की मूरत, आदिवासियों का रॉबिन हुड, कितने बदल गए आदिवासी, खेत की मेड़ पर, पढ़ बेटी इत्यादि।

कवि ने अपनी कविताओं में अनेक स्थानीय बोली के शब्दों को समावेशित कर पाठकों को थोड़ी मेहनत मशक्कत करने को कहती है जैसे छोकड़ा का पेड़, जोरू मोहरू, जयरामपेशा, गुलुमीर, आलूदा, टिक्कड़, तिरमिराई ,अमृत का मावट, फसल की लावणी, लोग लुगाई, कलसा-तमैंड़ी, दगड़ा, खाखोटी, सींगर इत्यादि!

कवि ने मणिपुर कांड, मध्य प्रदेश के मानव पर मूत्र विसर्जन कांड जैसे समसामयिक घटनाओं और तात्या भील, मानगढ़ के गुरु गोविंद गुरु, बिरसा मुंडा, अंबेडकर ,राणा पुंजा भील जैसे ऐतिहासिक चरित्रों को भी अपने काव्य संग्रह में स्थान देकर इस पुस्तक की सार्थकता में चार-चांद लगाने का काम किया है।

अंत में यह कहा जा सकता है कि यह काव्य संग्रह गागर में सागर के समान है ।जिसे पढ़कर लोग अपने आप को धन्य महसूस करेंगे।

पुस्तक का नाम- कितने बदल गए आदिवासी

समीक्षक- गोपेंद्र कुमार सिन्हा गौतम

लेखक- हरिराम मीना

प्रकाशक- अधिकरण प्रकाशन दिल्ली

प्रथम संस्करण 2024

मूल्य 365 रुपए

डॉ श्वेता दीप्ति

काठमांडू ,नेपाल

आत्म–कथ्य

मुद्दत बाद तुम मिले थे
उन्हीं राहों पर
जहाँ होती थी अक्सर
हमारी मुलाकात ।
आज मैं न जाने क्यों
खोज रही थी
तुम में ही, तुम्हीं को ।

तुम्हारे बेतरतीब बाल
जो लहराते थे
मेरी यादों में अक्सर
आज वो कुछ संवरे हुए थे
शायद तुम्हारी जिन्दगी की तरह ।
जो हाथ कभी संवारा करते थे
बेतरतीबी से बिखरे अपने बालों को
आज दबी थी उनमें
अधजली सिगरेट
और उनके छल्लों में
छुप रहा था बार– बार
तुम्हारा चेहरा ।
शायद मैं देखना चाहती थी
उस चेहरे में बीते कल को
छूना चाहती थी कुछ पल के निशां
पर वक्त की गर्द कहीं
उस पर भी छा गई थी ।
हाँ ! आज मैं खोज रही थी

सतीश राठी
आर 451, महालक्ष्मी नगर,
इंदौर -452 01 0

सशक्त,मार्मिक और रोचक उपन्यास: अम्मा

न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन से प्रकाशित **"अम्मा"** सुपरिचित साहित्यकार दीपक गिरकर का पहला उपन्यास है। दीपक गिरकर की प्रमुख रचनाओं में **"एनपीए एक लाइलाज बीमारी नहीं", (बैंकों के एनपीए पर पुस्तक), "बंटी,बबली और बाबूजी का बटुआ" (व्यंग्य संग्रह), "नींव के पत्थर" (प्रेरक आलेख), "उत्कृष्ट लघुकथा विमर्श" (आलोचना) का सम्पादन** शामिल हैं। इसके अतिरिक्त कई समाचार पत्रों और साहित्यिक पत्रिकाओं में दीपक गिरकर के कई लेखों, आलेखों, लघुकथाओं, व्यंग्य रचनाओं, कहानियों और समीक्षाओं का निरंतर प्रकाशन हुआ हैं। इसके अतिरिक्त कई साझा संग्रहों में दीपक गिरकर की व्यंग्य रचनाएँ और लघुकथाएँ प्रकाशित हुई हैं। **"अम्मा"**उपन्यास की विषयवस्तु नवीन धरातल का अहसास कराती है। उपन्यास का मुख्य किरदार अम्मा है, जो कि कथा के सूत्रधार को दिल्ली के रेलवे स्टेशन पर मिलती है। उपन्यास का ताना-बाना अम्मा के इर्द-गिर्द बुना गया है। इस कृति में उपन्यास और संस्मरण का मिश्रण है। इस कथा यात्रा का मूल पात्र अम्मा है। यह अम्मा नई दिल्ली रेलवे स्टेशन पर रोती हुई कथा के सूत्रधार को मिलती है और वह उस रोती हुई अम्मा को अपनी अम्मा बनाकर अपने घर ले आता है। यहां से यह कथा अम्मा के उत्कर्ष को प्रस्तुत करते हुए आगे बढ़ती है। जीवन में अच्छाइयां किस तरह से अच्छा फल देता है इस बात को कथा के प्रारंभ में ही प्रस्तुत किया गया है कि अम्मा के दुख को देखते हुए कथा का सूत्रधार अपनी रेल की टिकट को रद्द करवा लेता है और अम्मा के साथ फ्लाइट की टिकट बुक कर लेता है। जब वह फ्लाइट से अपने घर पहुंचता है तो उसे पता चलता है कि जिस ट्रेन से वह आने वाला था उस ट्रेन का एक्सीडेंट हो गया है और उस हादसे में कई लोग मर गए हैं। यहां पर लेखक यह संदेश देना चाहता है कि जब आप जीवन में कुछ अच्छा करते हैं तो उसके प्रतिफल के रूप में आपके जीवन में भी कुछ अच्छा ही होता है।

अम्मा का पात्र जमीन से उठकर अपने जीवन के शीर्ष पर पहुंचता है। इस यात्रा मेंअम्मा के जीवन के सारे संघर्ष इस पुस्तक के भीतर विद्यमान हैं और संघर्ष के भीतर से जीवन कैसे सकारात्मक भाव से सँवरकर आगे बढ़ता है, इसकी बड़ी रोचक और मार्मिक गाथा इस पुस्तक में कही गई है। पूरी कथा फ्लैशबैक में कही गई है। अम्मा के देहावसान की खबर से उपन्यास का प्रारंभ होता है और फिर किसी फिल्म की तरह अम्मा के जीवन की यात्रा का वर्णन लेखक के द्वारा किया जाता है। अम्मा के व्यक्तित्व का चित्रण प्रभावशाली है। लेखक लिखते हैं कि, अम्मा का चौड़ा चमकीला माथा, उनके चेहरे का तेज और अत्यंत गरिमामय व्यक्तित्व उनके हृदय को प्रभावित करता है और वे उनसे टूटी-फूटी हिंदी में बात कर लेते हैं। यहीं पर पता चलता है कि अम्मा की मूल भाषा तेलुगु है और कुछ-कुछ हिंदी में वह बात कर लेती है। अम्मा से बात करने पर लेखक को यह समझ में आता है कि उन्हें उनके जेठ जेठानी ने घर से बाहर निकाल दिया है। पति की मृत्यु 2 वर्ष पूर्व हो चुकी है और सारे रिश्ते पति की मृत्यु के साथ बदल गए हैं। उन्हें एक फालतू सामान की तरह घर से बाहर फेंक दिया गया है। इस बात को सुनकर ही लेखक उन्हें अपने घर पर ले आते हैं और वहां पर उसकी

पत्नी जानकी भी अपने पूरे हृदय से अम्मा का स्वागतकरती है, उन्हें पहले दिन से ही अपने परिवार का सदस्य बना लेती है। अम्मा भी परिवार की इस आत्मीयता को हृदय से स्वीकार करती है। परिवार के सारे सुख-दुख उसके अपने सुख-दुख हो जाते हैं और वह जिम्मेदारी के साथ न सिर्फ परिवार को संभालती है, अपितु समाज के लिए कुछ करने का उसका हौसला भी यहीं पर सामने आता है। अपनी इस समाज सेवा का प्रारंभ अम्मा एक स्वयं सहायता समूह बनाकर प्रारंभ करती है। अम्मा का दयालु स्वभाव उसे अपने कार्य में सफलता प्रदान करता है। जिस मल्टी में वह रहती हैं वहां के भी सारे लोग उनके आकर्षित करने वाले स्वभाव से बड़ी सहजता के साथ उनसे जुड़ जाते हैं और वह सबके सुख-दुख की साथी हो जाती है। अम्मा छोटे बच्चों के माता-पिता को काउंसलिंग करती है और बच्चों के पूर्ण विकास के लिए उनका मार्गदर्शन करती है। कथा का केनवास बहुत बड़ा है। कथा के प्रवाह में ही लेखक का बच्चा अमित जन्म लेता है। जब वह 3 साल से अधिक हो जाता है तो फिर एक और लड़के का जन्म होता है और जब वह बच्चा थोड़ा बड़ा होता है तो एक लड़की का जन्म होता है। यह पारिवारिक विकास भी कथा को जोड़े रखता है। अम्मा के सामाजिक यात्रा जो स्वयं सहायता समूह से प्रारंभ हुई वह बाद में कई सारे समूह तक विस्तारित होती है और अम्मा की इस लोकप्रियता से प्रभावित होकर बैंक के अधिकारी भी उनका सम्मान करते हैं। संस्थाएं सम्मान करती हैं तथा हर बात में उसका मार्गदर्शन लिया जाता है। अम्मा सोसायटी के लोगों से बात कर घर में काम करने वाली बाइयों की पगार हर साल बढ़वाने का काम भी करती है। स्वयं सहायता समूह के लोगों को वह शिक्षा का महत्व समझाती है और उनके सारे बच्चों को पढ़ने के लिए प्रेरित करती है। इसका प्रभाव भी अंत में दिखाया गया है कि बच्चे पढ़ कर ऊंची ऊंची पोस्ट पर चले जाते हैं। पूरे उपन्यास में लेखक कई बार अपने परिवार के साथ बाहर की यात्राएं भी करते हैं और उन यात्रा के संस्मरण बड़े रोचक तरीके से प्रस्तुत करते हैं, वहां पर भी अम्मा की भूमिका को रेखांकित करता हुआ उपन्यास आगे बढ़ता है।

इसके बाद अम्मा एक वृद्धाश्रम से जुड़ती है और वहां पर उनका ध्यान रखने के साथ-साथ उनके स्वास्थ्य के परीक्षण के लिए, उनके मनोरंजन के लिए, उनके पुनर्वास के लिए,उनके भरण पोषण के लिए सरकार से सहायता उपलब्धकरवाने का काम करती है। बैंक के समाज सेवा प्रकोष्ठ से वह उस वृद्धाश्रममें कंबलप्रदान करती है, पंखे लगवाने का काम करती है और भी बहुत सारे काम विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से करवाने का काम अम्मा के द्वारा सतत किया जाता है। अम्मा अपने अगले कदम के रूप में स्ट्रीट चिल्ड्रन के लिए काम करती है और विभिन्न चैरिटेबल ट्रस्टों के द्वारा अनाथाश्रम को व्यवस्थितकरवाती है।बच्चों की डॉक्टरी जांच करवाती है।उन्हें पौष्टिक आहार प्रदान करवाती है और उनके अध्ययन की व्यवस्था करवाती है। अम्मा का मार्गदर्शन सभी लोग मानने लगते हैं और अम्मा बच्चों के मध्य बाल सभा करवाने के साथ-साथ उन्हें दर्शनीय स्थलों की यात्रा भी करवाने लगती है। इस तरह जो सड़क के बच्चे रहते हैं, उन्हें भी एक घर प्राप्त हो जाता है।

इसके बाद अम्मा एक अस्पताल से जुड़ती है और वहां की व्यवस्थाओं में सुधार करवाने का काम करती है। इसके साथ में ही वह प्रयास कर उस हैदराबाद शहर में एक कैंसर अस्पताल की भी स्थापना करवाती है। अम्मा को सारे रोगी पसंद करते और यह मानते कि अम्मा का उनके सर पर यदि हाथ आ जाएगा तो वे स्वस्थ हो जाएंगे। अम्मा भी सबके सिर पर अपना हाथ बड़े प्रेम के साथ रखती थीं।

अम्मा के सामाजिक कार्य कभी रुकते नहीं हैं। वह आश्रम का निरीक्षण करती रहती है। विभिन्न स्थानों के आश्रम उनकी निगाह में रहते हैं और जब कहीं पर कोई अव्यवस्था देखी है तो उसका निराकरण तुरंत करती हैं। वर्षा के मौसम में अम्मा सबको प्रेरित करती है कि वे वृक्ष लगाए, वृक्षों की सेवा करें और नए पौधों की पूरी देखभाल करें। इस कार्य में वह प्रशासन को भी शामिल कर लेती हैं। अम्मा एक पुस्तकालय की स्थापना कर बच्चों को पुस्तक पढ़ने के लिए प्रेरित करती है और इसी प्रकार समय आने पर वह विभिन्न संस्थाओं का निरीक्षण भी करती रहती है। एक बार जब वह फैक्ट्री का निरीक्षण करने जाती है तो वहां बोर्ड तो लगा रहता है कि यहां पर बाल श्रमिक प्रतिबंधित है, लेकिन जब वह फैक्ट्री के भीतर जाती है तो वहां पर बाल श्रमिक कार्य करते रहते हैं। इस बात पर अम्मा फैक्ट्री मालिकों से बात करती है और जब मालिक अपनी गलती मान लेते हैं, तो वह उन्हें कहती है कि पश्चाताप के रूप में अब आप इन बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था करें और इस प्रकार उन बच्चों के जीवन को सुधारने का काम करती है। आश्रय के नाम से वह एक एनजीओ स्थापित करती है और विभिन्न प्रकार के सामाजिक कार्य उसके माध्यम से करती रहती है। मजदूरों को संगठित कर उनकी मांग मनवाने के लिए जी तोड़ कोशिश करती हैं। अम्मा के सामाजिक कार्यों को देखते हुए उन्हें सामाजिक क्षेत्र में सर्वोत्तम योगदान के लिए मानव सेवा पुरस्कार से मुख्यमंत्री के द्वारा सम्मानित किया जाता है, जिसमें 5 लाख का नगद पुरस्कार उन्हें प्राप्त होता है। अम्मा उस राशि को भी सेवा कार्य में लगा देती है। अम्मा विकलांगों के लिए भी काम करती है और उन्हें ट्राई साइकिल दिलवाने का काम करती है। कुल मिलाकर इस पूरी पुस्तक में अम्मा के विभिन्न क्षेत्रों में किए गए बहु आयामी कार्यों का विस्तार से जिक्र किया गया है और उसके माध्यम से अम्मा के उत्कृष्ट चरित्र को प्रस्तुत करने का काम किया गया है। अम्मा की जिंदगी व कर्म क्षेत्र के बहाने लेखक वृद्धाश्रम के वृद्धों का, अनाथाश्रम के बच्चों का, झुग्गी-झोपड़ी के रहवासियों का, विकलांगों का दुखड़ा भर नहीं रोता, बल्कि पाठक को हाथ पकड़कर उनकी जिंदगी में शामिल करता है।लेखक उपन्यास में अपने बच्चों के जीवन के निर्माण का भी जिक्र करते रहते हैं और अपनी पत्नी जानकी के जीवन के निर्माण का भी जिक्र उनकी

बातों में रहता है। समय के साथ-साथ बच्चे बड़े होते हैं। उनका जीवन अच्छा होता है। सब अपने-अपने काम में लग जाते हैं और सूत्रधार की लड़की अम्मा के काम में उनका हाथ बंटाने लगती है।उपन्यास के अंत में यही लड़की अम्मा के निधन के बाद उस कार्य को अपने हाथ में ले लेती है और इस तरह लेखक ने समाज सेवा का कार्य पिछली पीढ़ी से नई पीढ़ी तक पहुंचा देने का दिशा निर्देश पुस्तक के माध्यम से किया है।

अम्मा ना सिर्फ अपनी देह का दान करने का फॉर्म भर देती है,अपितु पूरे परिवारजनों को एवं समाज के विभिन्न वर्गों को इस दिशा में प्रेरित करती है और उनसे भी फॉर्म भरवाती है। अम्मा के निधन के मार्मिक दृश्य से यह पुस्तक प्रारंभ होती है और अंत में यह उनकी अंतिम यात्रा पर समाप्त होती है जहां शपथ के अनुसार उनकी देह मेडिकल कॉलेज को दान कर दी जाती है। यह सारा चित्रण बहुत ही भावना पूर्ण तरीके से मार्मिक रूप से प्रस्तुत किया गया है जो पाठक को अम्मा से बहुत गहरे तक जोड़ देता है। यही इस उपन्यास की सफलता भी है। अम्मा के व्यक्तित्व की श्रेष्ठता को दर्शाने के लिए अंत में यह भी बताया गया है कि मरणोपरांत भारत सरकार अम्मा को पद्म विभूषण से सम्मानित करती है तथा यह सम्मान बिटिया अनु राष्ट्रपति के हाथों से प्राप्त करती है। अम्मा के बाद अनु की टीम इस समाज सेवा के कार्य को अपने हाथ में ले लेती है। अम्मा का चित्र गांधी अस्पताल में गणेश जी और साईं बाबा की मूर्ति के पास रख दिया जाता है। इस प्रकार उन्होंने समाज को जो दिया है उसको सम्मानित किया जाता है।

पुस्तक में ऐसी अनगिनत खूबियाँ है जिनका आस्वाद पढ़ते हुए ही लिया जा सकता है।उपन्यास के कुछ अंश :

अम्मा का उद्देश्य मात्र वृद्धाश्रम के बुजुर्गो की सेवा करना नहीं है बल्कि उनसे एवं उनके परिवार से बातकर आपसी विवादों को समाप्तकर समझौताकर बुजुर्गो की घर वापसी भी उद्देश्य है। पिछले तीन वर्षो में अम्मा ने अपने प्रयत्नों से सोलह बुजुर्गो की घर वापसी करवाई। अम्मा के विचारों के अनुसार वृद्ध व्यक्ति समाज के लिये संपत्ति की तरह हैं, बोझ की तरह नहीं और इस संपत्ति का लाभ उठाने का सबसे अच्छा तरीका यह होगा कि उन्हें वृद्धाश्रमों में अलग- थलग करने के बजाय मुख्यधारा की आबादी में आत्मसात किया जाए। अम्मा कहती थीं कि बुजुर्गों की जगह हमारे दिलों में और घर में होनी चाहिए, वृद्धाश्रम में नहीं। (पृष्ठ 41)

कुछ सालों बाद अम्मा देख रही हैं कि झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाले बच्चों में से निहारिका एमबीए कर रही है, काव्या रिसर्च की तैयारी में लगी है,

राहिल, सर्वेश और कावेरी सीए की तैयारी कर रहे हैं। सुप्रीथ पुलिस इंस्पेक्टर बन गया है। रामकृष्णा की हायर सेकंडरी स्कूल में शिक्षक की नौकरी लग गई है। वेंकैया आँध्रप्रदेश पब्लिक सर्विस कमीशन की तैयारी कर रहा है। दिव्या, वेणुगोपाल और भागमती राष्ट्रीयकृतबैंक में नौकरी कर रहे हैं। अमीना मल्टीनेशनल कंपनी में नौकरी कर रही है, रवि मेडिकल कॉलेज से एमबीबीएस कर रहा है, अर्जुन सिविल सर्विसेज की तैयारी में व्यस्त है। शशिकला ने एमए समाजशास्त्र विषय में कर लिया है। सभी अपना करिअर, अपनी पहचान बनाने में जुटे हैं। (पृष्ठ 70)

अम्मा का सहयोग और अर्जुन की मेहनत से अर्जुन का सिलेक्शन सिविल सर्विसेज में हो गया। अर्जुन की यूपीएससी में तीसरी रैंक आई। सफलता की चमक ने उसके चेहरे की रौनक बढ़ा दी थी। अर्जुन ट्रेनिंग के लिए मसूरी चला गया। मसूरी से ट्रेनिंग पूरी कर अर्जुन की पहली पोस्टिंग एसडीएम के पद पर आँध्रप्रदेश में ही एक कस्बे में हुई। (पृष्ठ71)

एक दिन जानकी घर के कामों में लगी हुई थी तब अम्मा ने जानकी को आवाज देकर बुलाया और कहा "मीरुरोजंतापनिलोबिजीगाउंटारु.

पिल्ललबाल्यंतिरिगिरादु, वारितोकूडाकोतसमयंगडपंडि. जीवितंलोनिआनंदंआनंदंकादु. आनंदंतोजीविताम्निगडपंडि. मीजीवितमंतापनिजरुगुतूनेउंटुंदि."

("तुम दिन भर काम में लगी रहती हो। बच्चों का बचपन दोबारा लौटकर नहीं आएगा, कुछ समय बच्चों के साथ भी गुज़ारों। जिंदगी का मजा सुख नहीं आनंद है। आनंद के साथ जिंदगी जिओं। काम तो जिंदगी भर होते रहेंगे।") (पृष्ठ91)

अम्मा अपनी जीवन संध्या में भी ऊर्जावान व सकारात्मक दिखती थीं। हैदराबाद में जितने भी मेहनतकश लोग थे, उन्हें कोई भी समस्या होती तो वे आशाभरी निगाहों से अम्मा की ओर देखते थे। अम्मा को सभी लोग आसमान से उतरा देवदूत मानते थे। उन्हें देखकर लगता था कि मानो ये अक्षय ऊर्जा का कोई स्त्रोतहै। अम्मा की तरफ कभी भी देखो, आँखों में वही चमक, आवाज में वही खनक। थकती नहीं हैं ये अम्मा? हर काम को करने में ग़ज़ब का उत्साह। ऐसे व्यक्ति पूरे माहौल को ताजगी से भर देते हैं। अम्मा के शब्द मरीजों के लिए औषधि का काम करते थे। अम्मा का जीवन उन तमाम लोगों के लिए अक्षर प्रेरणाहैं, जो संघर्ष और सेवा के क्षेत्र में प्रतिबद्ध भाव से सेवा करना चाहते हैं। अम्मा के पास जब भी जाओ, मिलो, गले से लगा लेती थीं और पीठ पर हाथ सहलाती थीं तो ऐसा लगता था जैसे कोई जादू का असर हो रहा है। (पृष्ठ115)

क्या सभी को अहसास हो चला था कि अम्मा चीरनिद्रा में जा चुकी हैं। पेड़ों से गिरने वाले पत्ते तक खामोश थे। तालाब का पानी बिना किसी लहर के चुपचाप पड़ा था। आज सारा शहर उदास था। (पृष्ठ118)

राज्य के मुख्यमंत्री,राज्य के कई मंत्री और देश के समाज कल्याण मंत्री भी अम्मा की अंतिम यात्रा में शामिल थे। महात्मागांधी की अंतिमयात्रा के अलावा किसी की भी अंतिम यात्रा में इतने लोग पहले कभी नहीं आये थे। इतने पुरुष और महिलाओं की भीड़। इतने पत्रकार। कैमरे। टीवी के लोग। हैदराबाद की जनता अम्मा को चाहती थीं। (पृष्ठ119)

आज सभी अनु की शादी का एलबम देख रहे हैं। कित्ती अच्छी फोटो आई थी अम्मा की? और फिर स्मृतियों के

गलियारे में टहलते-टहलते ही सभी की पलकें भीग जाती हैं। यादों का सफ़र अकसर आँसूओं पर ही समाप्त होता है। (पृष्ठ125)

यह उपन्यास कई लिहाज़ से अनूठा है। इस उपन्यास में अनुभूतियों की सच्चाई है। इसका सधा हुआ कथानक, सरल-स्पष्ट भाषा, चरित्र चित्रण व पात्रों के आपस की बारीकियाँ, पात्रों का रहन-सहन, व्यवहार, उनकी स्वाभाविकता, सामाजिक, आर्थिक स्थिति आदि बिंदुओं, हैदराबाद की पृष्ठभूमि इसे बेहद उम्दा उपन्यास बनाती है। भाषा में विशिष्टता, शब्दों का चयन, वाक्यों की बुनावट इस उपन्यास को अत्यंत पठनीय बनाता है। उपन्यास की कथा बहुत ही रोचक व संवेदनशील है। उपन्यास पढ़ते हुए मेरी आँखें भीग आई थीं। बगैर किसी भूमिका के एक पुस्तक पाठक के सामने प्रस्तुत होती है और समर्पण के तुरंत बाद पहले पृष्ठ से ही एक कथा यात्रा प्रारंभ हो जाती है। अज्ञेय ने एक जगह पर कहा है कि जब कोई कथा या उपन्यास बिना किसी भूमिका के प्रारंभ हो जाते हैं तो वह अपनी सफलता का रास्ता स्वयं बुन लेते हैं। कथाकार दीपक गिरकर ने इस उपन्यास की कहानी को इस तरह ढाला है कि वह पाठक को अपने रौं में बहाकर ले जाती है।इस उपन्यासको पढ़ते हुए आप अम्मा, बाबूजी, जानकी, अमित, आशीष, अनु, रेड्डी साहब, अनिल, प्रोफेसर नायडू, गोदावरी, अनुराधा, कल्याणी मैडम, श्रीनिवासन साहब, सी. रेड्डी सर, श्रीधर राव सर, मारवाड़ी समाज ट्रस्ट के अध्यक्ष रामेश्वर माहेश्वरी जी, डॉक्टर अमन भार्गव, दीपाली, तेजस्विनी, अमय, विपुल, रंजना, विमला, संजना, कनिका, इमरान, आकांक्षा, अन्नपूर्णा, रामा, निहारिका, अमित, काव्या, राहिल, अमीना, दिव्या, रवि, अर्जुन, शशिकला, कृष्णमूर्ति, सर्वेश, सुप्रीथ, रामकृष्णा, वेंकैया, वेणु गोपाल, भागमती, कावेरी, सी. अनसूया, शमीना, अंजलि, श्वेता, रुक़य्या, अम्बाली, चित्रा, दीपंकर, ईशान, ऋत्विक और रागव इत्यादिकिरदारों से जुड़ जाते हैं। लेखिकानेपात्रोंकाचरित्रांकनस्वाभाविकरूपसेकियाहै।जीवन के गहरे मनोभावों को लेखक ने पात्रों के माध्यम से अधिकाधिक रूप से व्यक्त किया है। कथाकार ने किरदारों को पूर्ण स्वतंत्रता दी है। कथाकार दीपक गिरकर ने स्थानीय संस्कृतियों, सभ्यताओं, उनके इतिहास और विभिन्न सामाजिक संरचनाओं को बड़ी सूक्ष्मता से चित्रित किया है।इस कृति में लेखक की परिपक्वता, उनका सामाजिक सरोकार स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। लेखक दीपक गिरकर ने अनुभवजन्य भावों को सार्थकता के साथ चित्रित किया है। इस उपन्यास को पढ़ने वाले की उत्सुकता बराबर बनी रहती है वह चाहकर भी उपन्यास को बीच में नहीं छोड़ सकता। उपन्यास की कहानी में प्रवाह है, अंत तक रोचकता बनी रहती है।इस उपन्यास में गहराई, रोचकता और पठनीयता सभी कुछ हैं। दीपक गिरकर एक सशक्त और रोचक उपन्यास रचने के लिए बधाई के पात्र हैं।

पुस्तक: अम्मा (उपन्यास)
लेखक: दीपक गिरकर
प्रकाशक: न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, सी-155, बुद्ध नगर, इंद्रपुरी, नई दिल्ली- 110012
प्रथम संस्करण : 2024
मूल्य: 225/-रूपए

बृज राज किशोर 'राहगीर'

ईशा अपार्टमेंट, रुड़की रोड, मेरठ (उ.प्र.)

एक प्रश्न

लड़कियाँ
अब छुई-मुई नहीं रहीं।
वे पढ़ती-लिखती हैं,
काबिल बनती हैं।
वे नौकरी करती हैं,
वे व्यापार करती हैं,
वे करती हैं
मुश्किल से मुश्किल काम।

लड़कियाँ
अब अबला नहीं रहीं,
वे सबल हैं, सशक्त हैं।
वे लड़ती हैं
परिवार से,
समाज से,
दुनिया-जहान से
और बनाती हैं
अपने लिए रास्ते।

पर एक प्रश्न
मुझे भीतर तक झकझोरता है,
बार-बार, लगातार।
यही सशक्त लड़कियाँ
क्यों कमजोर पड़ जाती हैं
एक दुष्ट बलात्कारी के सामने?
वे क्यों नहीं फोड़ डालती उसका सर?
क्यों नहीं नोच डालती उसका चेहरा
अपने तीखे नाखूनों से?
क्यों नहीं उसकी आँखों में घुसा देती
अपनी उंगलियाँ?
उस विपदा काल में
क्यों उनका साहस दे जाता है जवाब?
क्यों, आख़िर क्यों?

शैलेन्द्र चौहान
संपादक - धरती
34/242, सेक्टर-3, प्रतापनगर, जयपुर-302033

'धरती' पत्रिका की यात्रा

आपातकाल के बाद कुछ ठीक-ठाक लिखने का सिलसला प्रारंभ हुआ। जब तक कॉलेज में पढ़ रहा था तब तक कहीं कुछ भेजा नहीं छपने। इंजीनियरिंग की शिक्षा पूरी करना प्राथमिक आवश्यकता थी। पिता का भी डर था। उनकी प्रतिक्रिया बहुत अपमानजनक हो सकती थी। फायनल की परीक्षाएं समाप्त होने के बाद पर्याप्त समय मिला। यह 1976 -77 की बात है। तब तक मुझे छपने का तौर-तरीका भी मालूम नहीं था। संकोच था। मित्रों ने प्रोत्साहित किया। धीरे-धीरे कुछ कविताएं दो-एक अखबारों में भेजी। एकाध जगह कुछ छपा। कहानियां भी छपी। व्यवसायिक अखबार, व्यवसायिक पत्रिकाएं। छपना मुश्किल था खासतौर से शुरूआती दौर में। कहीं कोई परिचय वगैरह भी नहीं था। कुछ सरकारी पत्रिकाएं भी थीं। अखबारों के बाद कुछ पत्रिकाओं में भी छपा। कादंबिनी और साक्षात्कार में कविताएं, सारिका में आसपास बिखरी कहानियां। इनमें छपना बहुत आसान नहीं था। तब पता चला कि लघुपत्रिकाएं भी छपती हैं जिनमें भी अच्छी रचनाएं छपती हैं। पहले उत्तरार्ध से परिचय हुआ फिर पहल से। तभी एक मित्र के विवाह में मथुरा जाना हुआ। वहाँ का. सव्यसाची जी से भेंट हुई। उत्तरार्ध में कविताएं भेजी। सव्यसाची जी ने जबाब नहीं दिया। तब सोचा कि क्यों न एक लघुपत्रिका स्वयं निकाली जाये जिसमें अपने जैसे रचनाकारों को छापा जाये। आर्थिक समस्या थी जो 1978 में स्थानीय पॉलिटेक्निक में व्याख्याता बनने के बाद हल हो गई। 1979 में धरती का पहला अंक निकला। 50-55 पेज का छोटा अंक था। बहुत सामग्री नहीं थी पर छपा खूबसूरत था। तभी 'उत्तरगाथा' में मेरी एक कविता छपी। तदुपरांत कवि-गीतकार जगदीश श्रीवास्तव, विदिशा और गजलकार अहद प्रकाश, रायसेन ने धरती का दूसरा अंक गजल विशेषांक निकालने की सलाह दी। तब तक सारिका में दुष्यंत कुमार की गजलें बहुत लोकप्रिय हो चुकी थीं। उनसे प्रेरित होकर बहुत लोग गजलें लिख रहे थे। जगदीश जी और अहद भाई ने गजलें जुटाईं। भाई जानकी प्रसाद शर्मा ने भी सहयोग किया। गजल अंक अच्छा बन पड़ा। इस अंक

विमोचन सुप्रसिद्ध चित्रकार भाऊ समर्थ ने किया। हालांकि गजल हिंदी साहित्य की प्रमुख विधा नहीं थी पर पढ़ी खूब जा रही थी। इसके बाद नौकरी बदल ली और विदिशा छोड़ मैं नांदेड़, महाराष्ट्र चला गया। एक वर्ष बाद 1980 में वहाँ से समकालीन जन-कविता अंक निकाला। इसका वहाँ अहिंदी-भाषी क्षेत्र में भव्य विमोचन हुआ। यह अंक काफी पसंद किया गया। अगले वर्ष महाराष्ट्र छोड़कर मैं इलाहाबाद पहुंच गया। वहाँ बहुत लेखकों से परिचय हुआ। शिवकुटी लाल वर्मा, विद्याधर शुक्ल, मत्स्येंद्र शुक्ल, सत्यप्रकाश मिश्र, सतीश जमाली, अमरकांत, मार्कंडेय, शेखर जोशी, अजित पुष्कल, शाश्वत रतन, प्रदीप सौरभ, अशोक त्रिपाठी आदि। विद्याधर जी की सलाह पर त्रिलोचन जी पर अंक निकालने की योजना बनी। सामग्री जुटाई और दिसंबर 1982 में अंक प्रकाशित हुआ। जनवरी 1973 में ही जयपुर में प्रलेस के राष्ट्रीय सम्मेलन में इसे लोकार्पित किया। यह अंक बहुत सराहा गया। इसके बाद आलोचना अंक आया। इसमें अशोक त्रिपाठी ने सहयोग किया। 1984 में मैं कानपुर आ गया। वहाँ से तीन सामान्य अंक निकले। कानपुर में ही शील जी पर अंक निकालने की योजना बनाई परंतु दो वर्ष तक उनपर अपेक्षित सामग्री हासिल नहीं हो सकी। अंततः शील जी के साहित्य को ही प्रस्तुत करने की ठानी। पचास कविताएं, कुछ कहानियां और लेख चुन लिए। तब तक मेरा स्थानांतरण कानपुर से मुरादाबाद हो चुका था। एक वर्ष बाद मुरादाबाद से कोटा पहुंच गया। 'शील' साहित्य अंक कोटा से प्रकाशित हुआ।

साथी शिवराम और महेंद्र नेह के साथ ही कोटा और पूर्वी राजस्थान के अनेक लेखक मित्रों का सहयोग और समर्थन रहा। अंक प्रकाशित होने के बाद शील जी के सानिध्य में कोटा में इसका भव्य विमोचन संपन्न हुआ। ऋतुराज जी, हेतु भारद्वाज, डा. जीवन सिंह, महेंद्र नेह, शिवराम, शंभु गुप्त, विनोद पदरज और अनेक अन्य स्थानीय साहित्यकार उपस्थित रहे। कोटा से अब जयपुर आ गया। बार-बार स्थानांतरण और कुछ पारिवारिक परेशानियों के चलते धरती का प्रकाशन स्थगित करना पड़ा। जयपुर से दादरी (गाजियाबाद) और फरीदाबाद होकर जब नागपुर पहुंचा तो पुनः प्रकाशन आरंभ किया। नागपुर से दो-तीन अंक निकले। नागपुर के बाद मैं मप्र आ गया। 2005 में इंदौर से शलभ श्रीराम सिंह पर अंक निकाला। इंदौर से बड़ौदा और बड़ौदा से पुनः राजस्थान आया। तो फिर 2008 में साम्राज्यवादी संस्कृति बनाम जनपदीय संस्कृति अंक प्रकाशित किया। राजस्थान से जम्मू पहुंच कर कश्मीर अंक निकाला (2010) और जम्मू से दिल्ली आकर मीडिया विशेषांक प्रकाशित किया (2013)। सेवा-निवृत्ति के बाद पुनः प्रकाशन बाधित हुआ। कुछ अस्थिरता के बाद जयपुर रहने का ही निश्चय किया। दिल्ली जमा नहीं। दो-एक वर्ष का समय यूं ही निकला। फिर कोरोना का महा-प्रकोप घटित हुआ। दो वर्ष और बीते। एक बार फिर प्रकाशन संभला। गत दो वर्षों में चार अंक निकले हैं। वैज्ञानिक चेतना और कथेतर गद्य अंक काफी सराहे गये। हाल ही में आलोचना अंक आया है। आगे सामान्य अंक की योजना है। कहीं से कोई आर्थिक सहयोग नहीं। प्रकाशन कार्य में भी कोई साथ नहीं और अब प्रिंटेड बुक, पोस्ट की सुविधा भी डाक विभाग ने समाप्त कर दी है। जमाना डिजिटल हो गया है। सोशल मीडिया का वर्चस्व है। राह कठिन है। देखते हैं आगे कैसे और कब तक मैनेज हो सकेगा।

दोहे

अनीता मिश्रा सिद्धि

कालीकेट नगर,बेली रोड

भाषा ऐसी बोलिए ,मन मे उपजे नेह ।
सुने सभी जो ये कहे , कान में बरसे मेह।।

नशा कभी मत कीजिए , सुनिए मेरी बात ।
प्रीति मीत ही चाखिए,मगन रहें दिन-रात।।

मन के कोरे पृष्ठ पर , अंकित तेरा नाम ।
प्रणय कोष में रख लिया,बना तुझे घनश्याम ।।

निन्दा मत करना सखे,निन्दा पाप समान।
मन को ये मैला करे , और करे अपमान।।

निन्दा करके क्या मिला,सोचो मित्र सुजान।
प्यार अगर देते उसे , देता वो सम्मान ।।

रिश्तों से मिलकर बना , यह सारा संसार
आपस मे जब प्यार हो , महके घर -परिवार ।।

सुता नेह की गागरी , रखना इसे संभाल ।
पग में पायल बांधकर,चलती मोहक चाल।।
बेटी घर की शान है , बेटी है अरमान।
नारी के इस रूप का ,सभी करे सम्मान।।

प्यासी धरती करुण हो, करती यही पुकार ।
जल का संचय कीजिए , जल जीवन का सार ।।

बिन जल के सूनी धरा, समझो इसकी रीत ।
बूँद-बूँद अनमोल है, इसे बचाओ मीत ।।

जल से ही जीवन बने, जल ही है आधार।
व्यर्थ कभी मत कीजिए ,जल का ये संसार।।

मात शारदे लीजिये , मुझको अपना मान।
प्रेम सहित अर्चन करूँ, चरणों मे हो ध्यान।।

मातु शारदे दीजिए , ऐसा अब वरदानज़ह।
दोहा ,कविता , मैं रचूं, जग में पाऊँ मान।।

माता! तुम ममतामयी , सकल गुणों की खान ।
साहित्यिक सेवा करूँ , रच दूँ नवल -विधान।।

जय जय माता शारदे , रखना सिर पर हाथ ।
अपना मुझको मानकर , रखना अपने साथ।।

जले नेह-बाती सदा , रोली -चंदन- हार।
माता तेरा प्रेम ही , जीवन का आधार।।

अंधकार में डूबते , नैनन बहते लोर ।
सिर्फ प्यार की बूँद को , तरसे मन का मोर ।।

मातु कृपा की चाह में, जागूँ सारी रात ।
सजा प्रीत की थाल को,भजन करूँ दिन-रात।।

पैसा-पैसा जोड़कर,सुन्दर बना मकान।
प्रेमहीन जीवन बना, घर लगता वीरान।।

पैसे के लोभी हुए , तोड़ें सब जंजीर ।
चाखे रसना प्रीत क्यों,खाए कड़वा खीर।।

पाठक,समीक्षक और शिक्षिका अनि वर्मा की बेलौस प्रतिक्रिया : ईश्वर मलेच्छ है

अनि वर्मा

बहुत दिनों के इंतजार के बाद पुस्तक हाथ में आई और कुछ ही घंटों में पढ़ भी डाली। पहली बार ऐसा हुआ कि इतनी जल्दी कोई किताब पढ़ी हो। असल में एक बार पढ़ना शुरू करने के बाद किताब हाथ से छूटी ही नहीं।

'ईश्वर म्लेच्छ है' इस पुस्तक की लेखिका हैं कविता सिंह जी, जिन्हें मैं पिछले कुछ महीनों से पढ़ रही हूं और पहली ही बार में इनकी कविताओं से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकी थी पर जब इनकी पुस्तक का शीर्षक सुना तो थोड़ा अजीब लगा कि कोई ईश्वर को म्लेच्छ कैसे कह सकता है। ये नहीं है कि लेखिका नास्तिक या ईश्वर विरोधी हैं। फिर क्या वजह रही यह शीर्षक रखने की।इसी उत्सुकता के चलते मैंने सोचा कि इस किताब को पढ़कर इसकी समीक्षा जरूर लिखूंगी ताकि यदि कोई मेरी तरह भ्रांत है तो उसे स्पष्ट हो जाए कि वास्तव में ईश्वर म्लेच्छ क्यों है और चूंकि लेखिका इतिहास में एम ए कर चुकी हैं तो उन्होंने इतिहास की दृष्टि से बहुत सोच समझ कर ही यह शीर्षक रखा होगा।

इस पुस्तक में पांच खंड हैं जिनमें से प्रथम खंड है -'ईश्वर'।

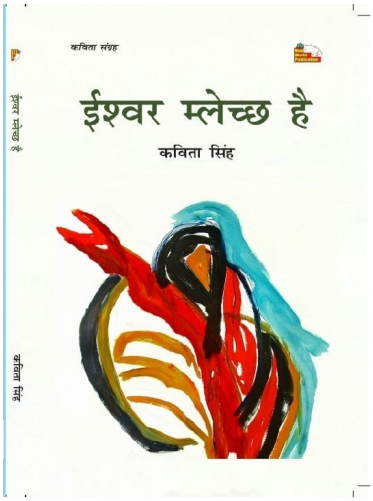

प्रथम खंड : ईश्वर

इन कविताओं में जो ईश्वर है वो कहीं से भी ईश्वर जैसा नहीं लगता, कहीं से भी उसमें ईश्वरत्व दिखाई नहीं देता।ऐसा लगता है वो लेखिका का कोई बाल सखा या छोटा भाई है जो निरा देहाती, आलसी,मैला और अशिष्ट है। म्लेच्छ शब्द के बारे में अच्छी तरह जांच पड़ताल करने के बाद यही समझ में आया कि वह व्यक्ति जो अशिष्ट है, अनार्य है, वैदिक रीति रिवाजों को नहीं मानता, वह म्लेच्छ कहलाया। इस दृष्टि से देखा जाए तो किताब का शीर्षक बिल्कुल ठीक बैठता है। वैसे भी तो सुधीजन भी "अपना अपना राम" की थीम मानते हैं। जो जिस रूप में देखेगा, ईश्वर वैसा ही दिखाई देगा। लेखिका ने उसे अपनी ही तरह म्लेच्छ कहा है। सच तो यह है कि इन कविताओं में कहीं ना कहीं से ईश्वर झांक रहा है। ग्रामीण मान्यताओं में और मां के छोटे मोटे विश्वासों में। "मां ने ईश्वर को देखा होगा" इस बात में कितनी बाल सुलभता है। लेखिका का ईश्वर एक चम्मच शक्कर के लिए परेशान हो सकता है और अपने काले रंग को लेकर दुखी भी। वो पेड़ कटने पर क्षुब्ध भी है तो ठेकुआ खाने के लिए अधीर भी। ईश्वर के साथ प्रेम और सख्यभाव इन कविताओं में हर जगह नज़र आ जाएगा।

दूसरा खंड है - 'चीजें'

गमछा, चूल्हा, छाता, फावड़ा, कटोरा, पतीला, सूपड़ा जैसी साधारण चीजों को लेकर लिखी गई कविताएं दिल छू जाती हैं। गमछा जहां परदेस में अपनेपन का प्रतीक लगता है तो फावड़ा मेहनत का। पतीला परिस्थितियों के साथ सामंजस्य ना बिठा पाने और अपनी स्थिति में बदलाव लाने की कोशिश करने जैसा लगता है। 'हल्दी' किसी के लिए खुशियों का प्रतीक है तो किसी के लिए जिम्मेदारी का। इस खंड में सबसे अधिक जो हृदय छू गईं,वे 'गमछा' और 'चूल्हा' कविताएं हैं।

तीसरा खंड है - 'प्रकृति'

' कीड़े के पक्ष में' में जहां लेखिका वर्ण भेद और जाति भेद पर आवाज उठाती हैं तो 'कौन जाएगा' और 'चिड़िया' के माध्यम से प्रकृति पर मंडराते संकट के प्रति चिंतित नजर आती हैं। 'पानी' इस खंड की बहुत सुन्दर और दार्शनिक सी रचना लगती है। 'बोरे में बंद बसंत' 'बदलाव' 'बुलडोजर' 'बचाव' ऐसी बहुत सी कविताएं प्रकृति को बचाने की गुहार लगा रही हैं। 'भाषा' और 'जबड़ों की भाषा' एक नितांत ही अलग दृष्टिकोण को प्रस्तुत करती हैं। ऐसा लगता है कि हर कविता में जंगल, पहाड़, गांव, देहात झांक कर अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं।

चौथे खंड - 'विस्फोट'

विस्फोट में में 'अहम पृष्ठ' 'मेथ्स का मटियामेट' 'विचरण' 'संवाद' और भी अनेक सुन्दर रचनाएं पढ़ी जाने योग्य हैं। "वर्णमाला का पहला अक्षर 'ह' होना चाहिए[वर्णमाला का पहला अक्षर 'ह' होना चाहिए" यह पढ़कर वाकई यह सोचने पर विवश हो जाती हूं कि क्या वाकई में मेरी हिंदी भी अब तक इतनी कमजोर थी। 'प्रयाग के पैर' एक लाजवाब रचना है। यहां तक पहुंचते पहुंचते आकंठ डूब चुकी हूं इन कविताओं की गहराई में। सीधा,सरल सा सौंदर्य है इनमें जहां कोई दुराव छिपाव नहीं। 'बची रहेगी धरती' कोमल प्रेम की अभिव्यक्ति है तो 'संवाद' प्रेम में संवाद को अनिवार्य कहती है। सच ही तो है, प्रेम का पौधा संवाद की नमी के बिना मुरझा जाता है। 'बच्चे टहल रहे हैं' पढ़ने के बाद एक अध्यापक की नज़र से नहीं बल्कि बच्चों की नज़र से देख रही हूं किताबों को। पहली बार लग रहा है कि बच्चों पर वास्तव में कितना भार है जैसे पूरी पृथ्वी को ही ढो रखा है अपनी पीठ पर।

पांचवां अंतिम खंड है - 'स्त्री'

स्त्री रूप में अधिकांश कविताओं में मां ही दिखाई देती है। गोदना गुदवाती हुई, छपाक से पानी में उतरती हुई गंवई औरतों के बीच,गोबर पाथती, घास काटती, रोटियां बनाती हुई 'मां'। "मां ने कविताएं नहीं लिखी पर उसकी रोटियां कविताओं से भी सुंदर हैं" यह कथन भावविभोर कर जाता है।
स्त्रियां ही हैं जो व्रत उपवास के जरिए प्रकृति को संजोए हुए हैं और स्त्रियां ही हैं जिनके हठयोग से ईश्वर भी स्वर्ग का द्वार छोड़ उसके द्वार पर आ खड़ा होता है।

कुल मिलाकर यह किताब प्रकृति का दर्पण है।वो सब है इसमें जिसे हम सब कभी ना कभी बहुत मिस करते हैं, गांव, देहात, जंगल,पेड़,पक्षी और बचपन.....भाषा जितनी सरल है भाव उतने ही गहरे। आंचलिक शब्दों का प्रयोग किया है पर वो भी इतने सहज हैं कि किसी को भी समझ आ जाएं। कुछ कविताओं में गीत चतुर्वेदी की झलक दिखाई दी मुझे। सारांश यह कि ये कविताएं वैसी ही हैं जैसे तपती गर्मी में ठंडा गन्ने का रस। घूंट घूंट कलेजे को ठंडा कर जाती हैं।

पुस्तक विमोचन : " ईश्वर म्लेच्छ है"

कविता सिंह की प्रथम प्रकाशित कविता संग्रह " ईश्वर म्लेच्छ है" का विमोचन नई दिल्ली में चल रहे विश्व पुस्तक मेले में 2 फरवरी 2025 को गणमान्य लेखकों एवं कवियों द्वारा किया गया। पुस्तक मेला दिनांक 1 फरवरी 2025 से 9 फरवरी 2025 तक देश की राज दिल्ली में प्रगति मैदान में आयोजित किया गया था। ईश्वर मलेच्छ है पुस्तक का विमोचन देश के जाने माने समकालीन कवि एवं लेखक डॉ जगदीश व्योम के हाथों अन्य वरिष्ठ कवियों और लेखकों और इस पुस्तक के प्रकाशक श्री मुकेश जी के बीच सम्पन्न हुआ।

पुस्तक के प्रकाशक न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन के कर्ता धर्ता एवं सर्वेसर्वा श्री मुकेश जी ने बातचीत में बताया कि पुस्तक के नाम को लेकर उनके और उनकी संपादकीय टीम के बीच काफी ऊहापोह रही ,काफी दिनों तक चर्चा चली , फिर टीम ने फैसला लिया कि इस पुस्तक को प्रकाशित करते है। नाम को लेकर पाठकों का जो भ्रम है ,वो भ्रम पुस्तक को पढ़ने के पश्चात दूर हो जाएगा।

कवियत्री एवं पुस्तक की लेखिका कविता सिंह ने बातचीत में बताया कि उनका ईश्वर उनका सखा है , उनकी कविताओं का लोकनायक ईश्वर है ,जो हमारे आपके जैसा ही है। हमारी आपकी तरह ही हँसता है , हमारी आपकी तरह ही बोलता बतियाता है ,हमारी आपकी तरह ही उसकों भी भूख लगती है, हमारी आपकी तरह ही टहलता है घूमता है ,हमारी आपकी तरह ही वो भी आम जन है।

कवियत्री एवं लेखिका से पुस्तक के नाम को लेकर चर्चा में ,कवियत्री ने बताया कि चूंकि मेरा ईश्वर मेरी ही तरह साधारण है ,आम आदमी है ,तो उसके अंदर भी साधारण आदमियों के गुण और दोष भी परिलक्षित होते है , मेरा ईश्वर मेरी ही तरह खाता पीता है और नींद आने पर चारपाई पर सो जाता है। कभी समय पर उठ जाता है , कभी कभी अलसाया पडा रहता है। जब मैँ ईश्वर को मलेच्छ कहती हूँ, तो ईश्वर को अपने जैसा ही देखती हूँ, अपने से पृथक नहीं देखती हूँ। मेरी कविताओं का ईश्वर ठेठ आमजन को दर्शाता है। मुझे यकीन है कि पुस्तक को पढ़ने के उपरांत पुस्तक के नाम को लेकर पाठकों का भ्रम दूर हो जाएगा।

144 पृष्ठों वाली यह पुस्तक न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित की गई है , पुस्तक का मूल्य 250/- रुपए है , पुस्तक अमेजन पर भी उपलब्ध है।

अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के 59 वें वार्षिक अधिवेशन समारोह की रिपोर्ट

दिनांक 16.02.2025 को होटल लॉर्ड्सइन, जयपुर में अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के 59वें वार्षिक अधिवेशन समारोह का आयोजन किया गया। इसकी अध्यक्षता सुविख्यात साहित्यकार एवं शिक्षा विद्डॉ. राघव प्रकाश ने की। मुख्य अतिथि के रूप में सुविख्यात साहित्यकार डॉ.नन्दभारद्वाज मंचासीन थे। समारोह के स्वगताध्यक्ष डॉ.इन्द्रसेंगर ने स्वागत भाषण में कहा कि यह अत्यन्त हार्दिक बात है कि प्रसन्नता की आयोजन की महाकुंभ के का अधिवेशन अवधि में आज प्रकाशकों के हिन्दी महाकुम्भ के लिए एक अखिल समान ही है। हिन्दी प्रकाशक भारतीय श्री ओम प्रकाश संघ के अध्यक्ष अपने भाषण में अग्रवाल ने वर्तमान की कहा कि प्रकाशकों को अपेक्षानुसार, संस्कृति और भारतीय प्राथमिकता अध्यात्म को आज राष्ट्रवाद देनी होगी। पुष्पित और को पल्लवित, की नितान्त भलीभूत करने है। आवश्यकता

इस अवसर पर श्री अनिल कुमार आर्य, सुबोध पॉकेट बुक्स, नई दिल्ली और श्री देवेन्द्र मलिक, मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर दो प्रकाशकों को उनकी श्रेष्ठ प्रकाशन-सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया। साथ ही, वरिष्ठ साहित्यकार डॉ.नन्द भारद्वाज, जयपुर और सुपरिचित साहित्यकार श्री राधेध्याम तिवारी, दिल्ली को ' श्री अरुण कुमार शर्मा' स्मृति पुरस्कारःसम्मान-2025 से सम्मानित किया गया।

इस अधिवेशन में ' इलैक्ट्रॉनिक युग में मुद्रित पुस्तकों का भविष्य' विषय पर एक संगोष्ठी का भी आयोजन किया गया। इसमें डॉ.सविता पाईवाल, श्री राजेन्द्र मोहन शर्मा, श्री प्रबोध गोविल, डॉ.सुषमा शर्मा, श्री संगीता गुप्ता और डॉ.प्रदीप गुप्ता एवं श्री राधेश्याम तिवारी आदि साहित्यकारों ने अपने महत्वपूर्ण विचार व्यक्त किए।

मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए वरिष्ठ साहित्यकार डॉ.नन्द भारद्वाज ने कहा कि इलैक्ट्रॉनिक युग में मुद्रित पुस्तकों की भूमिका और बढ़ गई है। मुद्रित पुस्तकों के प्रकाशकों के साथ-साथ समाचार पत्रों, मीडिया आदि का भी प्रकाशन के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान है। प्रकाशक, लेखक और पाठक एवं वितरक सभी को एकजुट होकर साहित्यिक यज्ञ को आगे बढ़ाना होगा।

शिक्षाविद् एवं साहित्यकार डॉ.राघव प्रकाश ने अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कहा कि पुस्तकों के मुद्रण और प्रकाशन में समय-समय पर इस प्रकार की क्रांति आती रही है। प्रिन्ट मीडिया और इलैक्ट्रॉनिक मीडिया एक दूसरे के पूरक हैं। इनमें से कोई भी एक दूसरे का स्थान नहीं ले सकता। प्रकाशकों को चाहिए कि वे पाठक की मनोवृति का भी ध्यान रखें। मुद्रित पुस्तक की महत्ता सदासर्वदा बनी रहेगी।

अन्त में अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के महामंत्राी श्री सौरभ शर्मा ने सभी का हार्दिक धन्यवाद व्यक्त किया।

द्वितीय सत्र में महामंत्री और कोषाध्यक्ष की ओर से वार्षिक रिपोर्टें अनुमोदनार्थ प्रस्तुत की गई और चुनाव अधिकारी की ओर से चुने गए (निर्विरोध रूप से) पदाधिकारियों की घोषणा की गई। इसके अनुसार श्री ओमप्रकाश अग्रवाल, जयपुर को पुनःअध्यक्ष, श्री सौरभ शर्मा को महामंत्री और श्री विजय गोयल को कोषाध्यक्षचुना गया। पाँच उपाध्यक्षों, एक मंत्री, चार संयुक्त मंत्रियों एवं कार्यकारिणी के सदस्यों का भी चुनाव किया गया। इनकी सूची इस प्रकार है।

अध्यक्ष – ओमप्रकाश अग्रवाल, पिंक सिटी पब्लिशर्स, जयपुर
महामंत्री – सौरभ शर्मा, जनवाणी प्रकाशन प्रा. लि., दिल्ली
कोषाध्यक्ष – विजय गोयल, साक्षी प्रकाशन, दिल्ली

परमानन्द दास

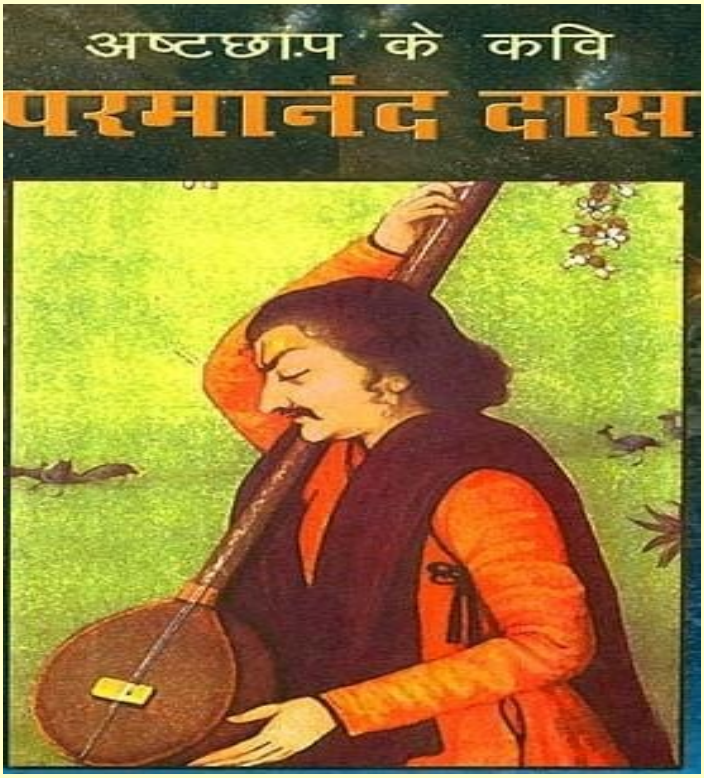

चैत्र मास संवत्सर परिवा बरस प्रवेस भयौ है आज।
कुंज महल बैठे पिय प्यारी लाल तन हेरैं नौतन साज॥

आपु ही कुसुमहार गुहि लीने क्रीड़ा करत लाल मन भावत।
बीरी देत दास परमानंद हरखि निरखि जस गावत॥

मानवी सेवा संस्था : राष्ट्र और राष्ट्र जन की सेवा में समर्पित

274/x ,शक्तिनगर कालोनी ,आरोग्य मंदिर ,गोरखपुर -273003

http://www.manvipatrika.co.in

(पत्रिका यहाँ से भी पढ़ सकते है)